नृसिंह ग्रन्थ माला नं० २०

सत्य सिद्धांत सहस्री।

लेखक:—

ला० मेलारामजी वैश्य

भिवानी।

प्रकाशक:—

नरसिंहदास रोशनलाल

भिवानी (पंजाब)

मुद्रक:—

मास्टर रामरक्षपाल मित्तल

सुमित्रा प्रिंटिंग प्रेस, भिवानी।

प्रथम बार	जून	मूल्य
१०००	सन १९४०	प्रेम

सत्य सिद्धांत सहस्री

❀ दो शब्द ❀

यस्यास्ति सद्ग्रन्थ विर्शा भाग्यम्, किं तस्य शुष्कैश्च पलाविनोदैः।

अर्थात्--जिन्हें उत्तमोत्तम ग्रन्थों के पढने और मनन करने का सौभाग्य प्राप्त है उनके समक्ष लक्ष्मी के शुष्क विनोद की क्या गणना है ?

संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने जन-समाज की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, नैतिक एवम् आर्थिक उन्नति की है। उन्हें महापुरुष बनाने का श्रेय उत्तम पुस्तकों तथा सद् ग्रन्थों को ही प्राप्त है। उन्हीं के पठन पाठन से तथा उन्हींके अनुसार सत्याचरण करने से वे महापुरुष बन सके हैं।

उत्तमोत्तम पुस्तकों के पठन मात्र से आपको कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकता, किन्तु पुस्तकों में जो ज्ञानामृत भरा है उस ज्ञानामृत को खोज कर उसका पान करने और सत्याचरण करने से ही आप जन समाजरूपि ईश्वर की सच्ची सेवा करनेमें समर्थ हो सकते हैं। यही लोक और परलोक में सुख प्राप्त करने का सरल साधन है।

मैने प्रस्तुत पुस्तक में १००० सत्य-सिद्धान्त अङ्कित किये हैं जो बहुत छोटे छोटे और साधारण वचनोंके रूप में हैं किन्तु

यदि इन बचनों का मनन किया जाय और जो सिद्धान्त अच्छे प्रतीत हों उनको क्रियात्मक रूप से अपनाया जाय तो पाठकों को निसंदेह भारी लाभ पहुंच सकता है। आशा है इस छोटीसी पुस्तक से सत्य-सिद्धांतोंके प्रेमी सज्जनों को कुछ लाभ पहुंचेगा।

दोहा-भार भाग को छोड़ के, लीन्हां सार निकाल।
सूत्र जान संकेत सम, नोट रचे तत्काल॥
हुआ सुभीता पाठ का, पढा त्वरित वह जाय।
गागर में सागर भरा, जो ढूंढे सो पाय॥
हैडिंग पढ़ कर लेख का, अवगत हो सब हाल।
ज्यों परखी से परखता, रखा हुआ सब माल॥

लेखक—



सत्य सिद्धांत सहस्त्री।

(१) सुख और दुख ये दोनो बड़े कठोर शासक है। इनका एक बार मनुष्य पर अधिकार जम जाने पर मनुष्य की पराधीनता का फिर अन्त नहीं हो सकता और ये दोनों एक के बाद एक मनुष्य पर अपना कठिन शासन करते रहते हैं।

(२) मै संसार मे अपना सिक्का जमा देना चाहता हूं किन्तु काम कुछ भी नही करता। ओह! तभी तो सफलता मुझ से कोसों दूर रहती है।

(३) संसार मे अधिक परिचय बढा कर तू क्या चाहता है? अन्याय अथवा याचना?

(४) यदि उदार बनना चाहता है तो दाता बन।

(५) सांसारिक भोग के साधन यहीं पड़े रहेंगे, धरोहर साथ नहीं जाती। उपभोग कर सके तो करले।

(६) अकर्मण्य व्यक्ति के भाग्य कपाट सदैव बन्द समझो।

(७) सत्ताधारियों के गुरु डाक्टर, वकील हैं।

(८) आप अपने स्वर्ग की धरोहर जिन्हें सौंपते हैं, क्या उनके आचरण तुम्हारी धरोहर को सुरक्षित रख सकेंगे ? यदि नहीं, तो जानते हुए मूर्ख क्यों बनते हो ?

(९) आपने अपने भोग की सामग्री तो जुटाली परन्तु जनता के दुखी प्राणों के त्राण का क्या प्रबन्ध (उपाय) सोचा है ?

(१०) चरित्र गठन से सन्तान के चरित्र-निर्माण का मार्ग सुगम हो जाता है।

(११) चरित्र-लेखन से भविष्य निर्माण में सहायता मिलती है।

(१२) कार्य करने वालों की अपेक्षा हुल्लड़बाज और तमाशाइयों का प्राबल्य है।

(१३) स्त्री जाति में लड़ना और खाना, यह दो ऐसे अवगुण हैं जिनसे उनका निरादर होता है।

(१४) आदर्श- विवाह वही है जिसका भार माता पिता तथा वर को प्रतीत न हो।

(१५) वह देव-विवाह नहीं जिसके प्रबन्ध करने में तन, मन, धन, धर्म, काल का विक्षेप खड़ा हो जाय।

(१६) प्राकृत नियम-विवाह को कितना दूषित कर दिया है। काम करते करते संयोजक अस्वस्थ हो जायं तथा इष्ट मित्र प्रचलित प्रथाओं का प्रति पालन करते २ तंग आजायं।

(१७) शिक्षितों को अशिक्षिता स्त्रियां, शिक्षिता को गंवार

पति, कन्या को वृद्ध, तरुणी को बाल पति, इन बेमेल विवाहों के कारण हमारे समाज का ह्रास हो रहा है।

(१८) क्या शिक्षितों का नागरिक जीवन और अशिक्षितों का ग्राम्य-जीवन उपयुक्त है ?

(१९) दम्भ से बड़े बने हुए पुरुषों का भविष्य वर्षा के बुलबुले के तुल्य है।

(२०) परखइये खोटा दाम नहीं लेते पर अपने खोटे दाम अन्य पुरुषों को दे देते हैं, क्या आपने कभी सोचा, इसमें क्या रहस्य है ?

(२१) चोरी की अपेक्षा मांगना अच्छा है, इसी प्रकार भ्रूण हत्या तथा व्यभिचार से विधवा विवाह अच्छा है।

(२२) संस्कृत पाठशालाएं भी अनाथालय-स्वरूप हैं, भेद केवल इतना है कि इनमें अनाथ सनाथ की देख रेख नहीं है।

(२३) हम आपकी सेवा करते हैं, आपके घर के मैले को साफ करते हैं, हर समय आपकी सफाई की ड्युटी पर तैयार रहते हैं, फिर भी आप हमें दुत्कारते हैं पुचकारते नहीं। यह स्वामी–सेवक का सम्बन्ध कब तक रह सकता है ?

(२४) हमें अन्य धर्म सब्ज बाग दिखला कर बुलाते हैं, फिर भी हम आपकी शरण में ठोकरें खाते हैं। क्या यह पहेली आपने कभी सोची है ?

(२५) मल शोधन तो सह्य हो सकता है–मां बेटियों की लाज का अपमान नहीं।

(२६) यदि चूने, पत्थर, ईंट से निर्मित विशाल अट्टालिका की पवित्रता का घमण्ड हो तो जरा सोचो तो—इसका निर्माण भी हमारे श्रम का ही फल है। दीनता के नाते आपसे कुछ पा भी गये तो जान पर खेल कर, बुर्ज पर चढ़ कर ईंट चूना भी तो हमने ही पहुंचाया था। उस समय तुम ऐसा संकोच नहीं करते थे, क्या सचमुच स्वार्थ अन्धा होता है ?

(२७) पहिले जीवित मनुष्यों की सेवा करो, तदुपरान्त मृतिकों की मूर्तियों की।

(२८) रामकृष्ण का भक्त हूं, रामकृष्ण के नाम पर लूटने वालों का नहीं।

(२६) उद्योग मर्द है, प्रारब्ध स्त्री।

(३०) उद्योग का जन्म पहिले और प्रारब्ध का बाद में है। प्रारब्ध बीच में धोका दे सकती है, उद्योग नहीं।

(३१) ऐसा दान दो जिससे भिक्षुकों की संख्या कम हो।

(३२) सज्जनों की उचित आवश्यकताओं की पूर्ति करो, उनके कष्ट में सहानुभूति प्रदर्शित करो, अपने नाम के लिए धन मत लुटाओ।

(३३) तुम से सभी अच्छे हैं परन्तु किसी की अपेक्षा तुम भी अच्छे हो। कब,—जब सोचते हो कि हमारे लिये कोई बुरा नहीं है, अपने अपने कर्मों से सभी बुरे भले हैं।

(३४) अकाल पीड़ित भाइयों के कष्ट में सहायता देने वाले धन्य हैं।

३५. यह जीवित मूर्तियां आपके द्वार को घेरे खड़ी हैं और आप दीवार पर टंगे मृतक चित्र पर ध्यान लगा रहे हैं, यदि कुछ उदारता है तो उन जीवितों का [illegible] करो।

(३६) जाति सुधार [illegible] शरीर को जर्जरित कर चुकी है यदि कर्मण्य युवक [illegible] रूढ़ियों [illegible] बुड्ढों के मस्तिष्क से निकाल दें तो। इसी प्रकार आरोग्य लाभ हो सकता है।

(३७) [illegible] मजे की बात है (बाल्यावस्था से डूबने वाले सूर्य का सादृश्य) युवक राक्षसी कृत्य कह कर वैश्या नृत्य को रोकते हैं और [illegible] बुड्ढे—"सदा से होता आया है" कह कर उसमें योग देते हैं। देखा जमाना कैसी तेजी से तरक्की कर रहा है? सच है बुढ़ापे में अक्ल सठिया जाती है।

(३८) सुधार के काम में भाइयों की तुनक मिजाजी और लापरवाही को स्थान मत दो वरना उद्देश्य से गिर जाओगे।

(३९) ब्रह्मचर्य-पालन और विद्या प्रदान, यह दो लक्ष्य भी यदि आपने अपना लिये तो समझिये कि जाति का सौभाग्य सूर्य्य शीघ्र ही उन्नति शिखर पर उदय हुआ देखेंगे।

(४०) जब कहीं सुधार-सभा का संगठन नहीं होता, तो बहुधा लोग कहा करते हैं कि सभा होनी चाहिए। जब सभा स्थापित हो जाती है तो उसके नियम-पालन से जी चुराने वाले सब से प्रथम वही देखे जाते हैं। मनुष्य की मनोवृत्ति के यह

दो चित्र सर्वत्र दृष्टि आते हैं।

(४१) आप ही नियम बनाएं, आप ही तोड़ें, और आप ही यह कहें, कि बाबा! नियम कौन मानता है। यह कैसे आश्चर्य की बात है।?

(४२) जब हम कहें कि आप इस अवसर पर खर्च कम कीजिये तब तो आप "पुरानी प्रथाओं के अनुसार चलेंगे" कह कर रुपया पानी की भान्ति बहाते हैं और जब किसी देश, धर्म के कार्य को रुपया देने को कहें तो अनावकाश बतला अथवा-व्यापार में घाटा सुना कर पिण्ड छुड़ाने की चेष्टा करते हैं। तुम्हारी यह दूषित मनोवृत्तियां तुम्हें भव बंधन से कैसे मुक्त कर सकेंगी?

(४३) गृह छोड़ा मठ की आवश्यकता हुई, पुत्र छोड़ा तो चेला, स्त्री छोड़ी तो चेली। इधर छोड़ कर निश्चित हुए उधर महन्त गिरी की तलाश में पड़े, यही सच्चा साधु-रहस्य है।

(४४) यदि गृहस्थी अनर्थ द्वारा अर्थोपार्जन करता है तो आप उससे याचना क्यों करते हैं? गृहस्थी लोक से धोका करता है आप परलोक से।

(४५) यदि बूढे खूसट हमारी सुधार सम्बन्धी बात नहीं सुनते हैं तो न सुनें, पर युवकों को तो सुननी चाहिए, उन्हीं के भरोसे पर तो सुधार का बीड़ा उठाया है।

(४६) किसी के पास धन बढ जाता है तो वह शत्रुता और हठ को बढा लेता है।

(४७) क्या विधवाएं,–साधु और यवनों की धरोहर हैं?

(४८) मैं हृदय मन्दिर में सुधारक-देव का दर्शन करना चाहता हूं परन्तु मुझे कुरीतियों का पुजारी ऐसा करने से रोकता है।

(४९) मेरी इस निर्बलता से कि मैं काम पड़ने पर सुधारक सिद्धान्त पर खड़ा नहीं रह सकता, विरोधी लाभ उठा लेते हैं और मुझे नीचा देखना पड़ता है।

(५०) हे युवक! पुरातन मार्ग को छोड़ नये मार्ग को ग्रहण करो, यही वीरों का काम है।

(५१) सन्तान वालों की अपेक्षा मेरा नाम चिरकाल तक स्थिर रहेगा क्योंकि मैंने पुस्तक रूपि पुत्र का प्रसव किया है।

(५२) ईश्वर ने मुझे जनता की सेवा के निमित्त भेजा है पुत्र सेवा को नहीं।

(५३) मेरे चरित्र में धुंधलापन यही है कि प्राय मैं रोगी रहता हूं।

(५४) मुझे कर्म जानते हैं, उपदेशक नहीं।

(५५) जो मनुष्य करने में पीछे और खाने में आगे रहे वह आदर नहीं पा सकता।

(५६) जो साधु होकर धन की आकांक्षा करता है वह धनवान पर अनुशासन नहीं कर सकता।

(५७) धर्मशाला मनुष्य का सत्कार है और पाठशाला

उद्धार।

(५८) साधु के सुन्दर शरीर और वस्त्रों पर मन रीझो बल्कि उसके सदाचार विचार के दास बनो।

(५९) जिस साधु का हृदय पवित्र नहीं है उसके चरित्र पर विचार करना व्यर्थ है।

(६०) मुझे लोक सेवा करने वाले महात्मा नहीं मिलते स्वोदर सेवी तो बहुत मिलते हैं।

(६१) जिनकी लोक सेवा में भी स्वार्थ की गन्ध है उनका क्या किया जाय?

(६२) अधिकारी को दान देना अमृत, अनधिकारी को देना विष के तुल्य है।

(६३) जितना आप अनधिकारी को दान देते हैं उतना ही उससे विष फैलता है जिसका फल समस्त समाज को भोगना पड़ता है।

(६४) मैं ऐसे ब्राह्मण को ब्राह्मण नहीं मानता जो जाति पक्ष पर अन्य जाति का गला काटता है।

(६५) मैं दान देना धर्म समझता हूं और आप लाभ समझते हैं। यदि ऐसा न होता तो मेरे न देने पर आप क्रुद्ध क्यों हो उठते?

(६६) आश्चर्य जनक बात है कि ब्राह्मणों के दान का भुगतान परब्रह्म को अपने घर से करना पड़े।

(६७) स्त्रियों को ब्राह्मणों ने बहका रखा है और युवकों

को पाश्चात्य फैशनों ने। फिर बतलाइये, घर में मुखिया की आज्ञा का कैसे पालन हो ?

(६८) काम करके खाना पुण्य है और निठल्ले रह कर अथवा दान याचना कर के खाना पाप।

(६९) जो ब्राह्मण मांगने को पसन्द नहीं करते वह आत्म गौरव के लिए स्वतन्त्र व्यवसाय करने लगे और बड़े ही प्रसन्न हैं।

(७०) ब्राह्मणों के यह दो रूप प्रसिद्ध हैं—मांगने के समय श्वान बन जाना और जाति पक्ष पर सिंह।

(७१) मरने वाले अपनी मौत मर गये परन्तु हम जीवितों को जान बूझ कर भूखों क्यों मारते हो ?

(७२) जो स्व-कर्तव्य-पालन नहीं करता वह पशु है।

(७३) अपनी योग्यता उतनी ही समझो जितना जनता सत्कार करती है।

(७४) जो मजहब गाली और द्वेष सिखाता है उसका अन्त समीप ही समझो।

(७५) जितने उपकार के कार्य हैं वे सब वान प्रस्थियो के हैं, सन्यासी तो आत्मप्राप्ति अथवा योगाभ्यास करें। संसार में बोझा ढोने वाले न बनें।

(७६) जो सन्यासी भोग सामग्रियों का संग्रह किये हुए है और अपने को अलिप्त घोषित करता है, ऐसी अनासक्ति भावना सर्वकाल नहीं रह सकती अथवा संसार के पदार्थ हज्म करने को यह स्वांग उसने रचा है।

(७७) सन्यासी गृहस्थी का बोझा हलका करने को है न कि गृहस्थी पर बोझा लादने को ?

(७८) गृहस्थी से यह कह कर कि तू पवित्र हो जायगा, तेरा धन परोपकार में लगेगा, आदि बातें बनाकर धन लेने में भी लोकेषणा का स्वार्थ है गृहस्थी के कल्याण का नहीं।

(७९) जब से सन्यासियों ने धातु को ग्रहण किया तभी से उनका ह्रास शुरू हो गया और सांसारिक पदार्थों में उनकी ममता बढ गई।

(८०) ब्राह्मण मुफ्त का माल समझ कर दान तो लेलेते हैं पर अपना जन्म सिद्ध अधिकार कह कर धमकी भी देते हैं, यह कौनसा धर्म है ?

(८१) दान को मुफ्त का माल मत समझो वरना ऐसा समय आजायगा जब संसार दान देना बन्द कर देगा।

(८२) दान का अधिकारी वही है जो निस्वार्थ भाव से जनता को लाभ पहुंचाता हो।

(८३) क्या कर्म करने से भाग्य फूट जायगा, नहीं, व्यर्थ की निराशा है।

(८) ब्राह्मण को ब्राह्मण के स्वरूप में देखो, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के रूप में नहीं।

(८५) मैं सुधार के काम में सब से बड़ा बनना चाहता हूं, छोटा नहीं। तभी तो निन्दा के हथियार से लड़ता रहता हूं।

(८६) मांगने की आदत बुरी है चाहे अन्य के लिए

ही क्यों न मांगा जाय।

(८७) थोड़ी रक़म के लिए दबाया जा सकता है, अधिक के लिए तो दाता की इच्छा पर निर्भर रहो।

(८८) पुजारी ने पण्डित से पूछा कि आपके पास थोड़े मनुष्य क्यों आते हैं ? तो पण्डित ने उत्तर दिया,-"मेरे पास आने में बुद्धि चाहिये।"

(८९) चोरी, जारी आदि पाप-कर्म्म करने पर भी जिसे दान मिलता रहेगा वह क्यों पाप का त्याग करेगा ?

(९०) यह शिकायत व्यर्थ है कि हमें पात्र अच्छे नहीं मिलते, जरा ढूंढ कर देखो।

(९१) हां ! यह बात सत्य है कि जब दाता ही सदाचारी नहीं तो वह सदाचारी पात्र को कैसे ढूंढ सकते हैं।

(९२) प्रशंसा मुफ्ती माल खाने वाले करते फिरते हैं उजरत पाने वाले नहीं।

(९३) जाकर फिर वापिस मठों में लौट आना साधु का काम नहीं गृहस्थियों का है।

(९४) आपने चन्दे के धन्धे का ठेका लिया है या देश हित कार्य का ?

(९५) अयोग्य पिता को जब हम श्रद्धा से नहीं नवते तो अयोग्य गुरु की पद पूजा कैसे कर सकते हैं। इसमें क्रोधित होने की क्या बात है ?

(९६) द्रव्य-हीन सदैव परमुखापेक्षी रहते हैं।

(९७) वैश्यों के लिए ब्राह्मण जोंक और क्षत्रिय बिच्छू हैं, यह विचार मिथ्या है।

(९८) बालकों को पुराण, युवकों को न्याय शास्त्र और वृद्धों को अध्यात्म शास्त्र पढाने चाहिएं।

(९९) आपका स्नेहपूर्ण बर्ताव मुझे याद है पर उसके विनिमय की चाह नहीं।

(१००) मैं क्या हूं, इसका पता नहीं। पर मेरे व्यवहार से मेरे स्वभाव को सब जानते हैं।

(१०१) यदि गाली देने से अथवा अपवाद उड़ाने से ही आपको शान्ति-लाभ होता हो तब तो आप अपना कार्य करते रहिये, मैं उसमें बाधा नहीं देना चाहता।

(१०२) मैं मूर्खों की गाली और क्रोध को बुरा नहीं मानता, क्योंकि और उनके पास धरा ही क्या है? हां! प्रत्युत्तर में अपनी क्षमा से उनका जोश ठण्डा करना जानता हूं।

(१०३) मूर्ख मनुष्य पिट कर अथवा हानि उठाकर मानता है, केवल उपदेश से नहीं।

(१०४) आजकल के साधु और गृहस्थियों में इतना ही अन्तर है कि उनके वस्त्र रंगे होते हैं और गृहस्थियों के नहीं।

(१०५) जो कमा कर अपने कुटुम्ब का पालन करता है, मैं उसे एक बी० ए० से अधिक सुयोग्य समझता हूं।

(१०६) मैं वृद्धों की अपेक्षा युवकों का अधिक मान करता हूं, क्योंकि मुझे उनसे काम लेना है।

(१०७) किसी कार्य के सम्बन्ध में सलाह लेने की आवश्यकता पड़े तो मैं वृद्धों के पास स्वयं दौड़ा जाता हूं क्योंकि उनके अनुभव सफलता की सीढी हैं।

(१०८) मैंने उस कूएं का पानी नहीं पीया जो पद पद पर नया रंग बदला करे।

(१०९) जैसे शहर में रहने वाले जैन साधुओं का प्रभाव कम पड़ता है वैसे ही पार्टी बन्द लीडर का प्रभाव जनता पर नहीं पड़ता।

(११०) यह अभिमान अच्छा है कि किसी के पास मांगने नहीं जाना।

(१११) वह लोभी अच्छा है कि जो अफसर को रिश्वत नहीं देता।

(११२) वह क्रोध अच्छा है जिससे चोर और जार को भय बना रहे।

(११३) वह काम अच्छा है जिससे सुयोग्य सन्तति उत्पन्न हो।

(११४) दान तो होता है परन्तु विवेक पूर्ण नहीं?

(११५) दान देने का अर्थ लोगोंने धन फैंकना ही समझ रखा है किन्तु यह नहीं सोचते कि इससे क्या फल होगा।

(११६) जैसे अच्छे माल के लिए प्रयास करना पड़ता है वैसे ही अच्छे भिक्षुक की खोज करनी पड़ेगी।

(११७) घर में धन न हो तो दूसरे से उधार भी लिया

जाता है, इसी प्रकार स्वजाति में गुण न हों तो अन्य जाति से ग्रहण करने में कोई संकोच न करना चाहिए।

(११८) नये नये हुनर सीखने चाहियें. क्योंकि अब पुराने कामों में लाभ नहीं।

(११९) लोभी डाक्टर, वैद्य को मैं खतरनाक समझता हूं क्योंकि वह स्वार्थ सिद्धि के निमित्त जनता को आपत्ति में फंसा सकता है।

(१२०) काम करने का अभ्यास करो, बकवास का नहीं।

(१२१) जो अपने नाम पर संस्था खड़ी करता है वहां पर बिना दाम के कोई सहयोग नहीं देता।

(१२२) निस्वार्थ मनुष्य ही सेवा कर सकता है, स्वार्थी नहीं।

(१२३) आजकल दान की प्रगति नाम पर समाप्त होती है यदि नाम की इच्छा को त्यागकर कार्य किया जाय तो जनता का सच्चा हित हो सकता है।

(१२४) जनता में सेवा के भाव बहुत थोड़े हैं और ईर्षा द्वेष के अधिकतम।

(१२५) मैं रूढ़िवाद से अथवा लोक भय से उन ब्राह्मणों का सत्कार करता हूं जिनके कर्म सत्कार के योग्य नहीं।

(१२६) निखट्टू अथवा निकम्मे पिता को कौन धन सौंपता है और कौन उसे हार्दिक प्रेम करता है?

(१२७) भाई! हमीं हम करते और मरते रहे, कुछ

आप भी करेंगे ?

(१२८) थोड़ासा नमूना सुधार का करके आपको दिखाया है वह भी आपको पसन्द नहीं फिर अधिक सुधार कैसे करें, बतलाइये ?

(१२९) तू सदैव बड़ों की ओर टकटकी बांध कर देखता रहता है परन्तु कभी गरीबों की ओर भी तो देख,—वे किस दीनता से देख रहे हैं ?

(१३०) सब यही चाहते हैं कि मेरा मान हो, चाहे गुण कुछ भी न हो, तभी तो आज वर्ण संग्राम हो रहा है। अब बताइये कोई बिना गुण के गुणवान कैसे माना जा सकता है ?

(१३१) यदि गुण से गुणवान माना जाय तो कोई झगड़ा नहीं।

(१३२) मनुष्य मात्र ही अपने नाम को ऊंचा करने की चेष्टा करता है किन्तु श्रेष्ट मनुष्य ही देश और जाति का नाम ऊंचा करता है।

(१३३) दुकानदारी भानमती का तमाशा है। जब तक तमाशा है तब तक सब है, तमाशे के बाद क्या है ?

(१३४) सांसारिक मनुष्य लड़ने में आनन्द पाता है शान्ति में नहीं।

(१३५) जो दुकान अथवा दफ्तर से भागता है उस से लक्ष्मी भी भागती है।

(१३६) कर्म तो सभी जीव करते हैं किन्तु एक रत्नों में

हाथ डालता है, दूसरा मिट्टी में।

(१३७) भलाई की क़दर नहीं होती किन्तु बड़ाई होती है।

(१३८) संसार में गप्पबाज अधिक हैं और काम करने वाले थोड़े।

(१३९) विदेश में राजा और गांव में बाजा कभी मान नहीं पाते।

(१४०) कायर मनुष्य कभी न्याय प्राप्त नहीं कर सकता।

(१४१) जिस दिन मनुष्य अपने परिश्रम द्वारा अपना निर्वाह करने लग जायगा उसी दिन सत्युग आजायगा।

(१४२) लोग बोल देखते हैं, पोल नहीं।

(१४३) मनुष्य ऋण, मूल लौटा सकता है किन्तु ब्याज और आवाज नहीं।

(१४४) कटु वाक्य कह कर मैं भी आपका दिल दुखा सकता हूं किन्तु ऐसा करना सभ्यता के विपरीत है।

(१४५) आपके पास सफाई और सफेद कपड़े हैं, किन्तु वास्तविक द्रव्य नहीं।

(१४६) जैन्टिल मैन का पाकेट सदैव खाली होता है, चाहे शान कितनी ही बनाये रखे।

(१४७) यदि शरीर में बल हो तो दुष्ट प्रकृति पुरुष डाकजनी करने से नहीं चूकता।

(१४८) सज्जन को कष्ट हो तो समझो ईश्वर उसके

पूर्व कर्मों का फल भुगता रहा है।

(१४६) नां करना सहज है परन्तु हां करने में जोर पड़ता है।

(१५०) शिक्षा देने वाले को पहिले हृदय को दृढ कर नियमों में कटिबद्ध रहना चाहिए।

(१५१) संसार मे इस समय त्यागी और सेवकों की आवश्यकता है न केवल सेवक से काम चलता है और न केवल त्यागी से।

(१५२) संग्रह और त्याग दोनों में कष्ट है अतएव मैं सम अवस्था रख कर कालयापन करता हूं।

(१५३) सभी सरल काम करना चाहते है कठिन नहीं।

(१५४) मैं वृद्धावस्था को प्राप्त हो चला परन्तु मुझे सच्चे मोतियों की परख नहीं आई।

(१५५) संसार में सच्चे मोती परोपकारी और तपस्वी हैं।

(१५६) जो मनुष्य अपने आपका सुधार नहीं सकता वह संसार को क्या सुधारेगा ?

(१५७) लज्जा, अभिमान और गौरव से सामाजिक बन्धनों में बंधा हुआ मनुष्य स्वतन्त्रता का आनन्द नहीं ले सकता।

(१५८) सड़क पर चलने वाले बहुत हैं परन्तु उसके बनाने वाले कहीं २ ही दिखाई देते हैं।

(१५९) सांसारिक कार्यों से अवकाश मनुष्य मात्र को

मिलता है किन्तु उन विचारों का मनन न करके मनुष्य उसे आलस्य और प्रमाद में नष्ट कर देता है।

(१६०) तीन रात्रि तक जिसके साथ काम पड़ जायगा उसकी वास्तविकता का पता अवश्य लग जायगा।

(१६१) मैं यश चाहता हूं किन्तु यश के लिए पुण्य कार्यों में हाथ नहीं डालता, फिर बीज के बिना फल कहां से आ सकते हैं ?

(१६२) अधिक खर्चना भी ठीक नहीं और कम खर्चना भी ठीक नहीं कारण उचित पुर्जा ही यन्त्र को चला सकता है।

(१६३) मनुष्य जितनी छान बीन करता है उतने नये भेद निकलते हैं।

(१६४) जिसका प्रभाव अपने घर पर नहीं है वह शहर पर क्या प्रभाव डालेगा ?

(१६५) आज कल के जेन्टिलमेन शब्द परखते हैं भाव नहीं।

(१६६) अंग्रेजी शब्द मिश्रित भाषा को अब सभ्य सभ्यता की दृष्टि से देखते हैं।

(१६७) दोष निकालने पर आपको दोष आता है तो फिर आपको होश त्रिकाल में भी नहीं हो सकता।

(१६८) पंचायतों में मूर्ख धनवान की और सभाओं में निर्धन विद्वानों की पूजा होती है।

(१६९) मैं तो लड़की को सच्चा धन मानता हूं कूड़ा

कर्कट नहीं कि उसे घर से बाहर फैंकने की जल्दी करूं।

(१७०) स्त्रियों में विद्या नहीं, धनोपार्जन का उपाय नहीं, इस लिए पुरुषों ने उनकी बेकदरी कर रखी है।

(१७१) दस पांच पची त्रिपली ही झगड़ा करते हैं शेष सब अपनी मौज में समय व्यतीत करते हैं उनको दीन दुनिया के दुखों की खबर ही नहीं।

(१७२) यद्यपि द्रव्य व्यय करके आपने प्रतिष्ठा प्राप्त करली है किन्तु आमदनी के बिना वह स्थिर नहीं रह सकती।

(१७३) आज जो रुपये की परवाह नहीं करता कल उसे पैसे की परवाह करनी पड़ेगी।

(१७४) वस्तु नित्य बनती बिगड़ती है इससे भी यही सिद्ध होता है कि उद्यम करना आवश्यक है।

(१७५) करोड़ पति मूर्ख से लखपति विद्वान हजार गुणा वैभव युक्त होता है।

(१७६) मूर्ख का धन अज्ञात में ठगा जाता है और विद्वान का धन दानादि मे व्यय होता है।

(१७७) आध सेर मिठाई खिलाकर मुझे भी अन्याय में सम्मिलित करते हैं क्या इसी का नाम बिरादरी है?

(१७८) यह कैसा भाई चारा है, बिना खाये प्रसन्न नहीं होते और विवाह इत्यादि में सम्मिलित भी नहीं होते।

(१७९) यह अच्छा बन्धुत्व है. कि चार दिन रोटी नहीं खिला सकते परन्तु विवाह मे मिठाइयों के टोकरे भर भर

लुटाते हैं।

(१८०) कर्म हीन मनुष्य का नाम संसार में बहुत दिन नहीं चल सकता किन्तु जो काम करता है उसका संसार भी दास बन जाता है।

(१८१) जिस जीवन में कोई शिक्षा न मिले उस जीवन के सुनने से क्या लाभ ?

(१८२) बड़े मकान का महत्व तो बहुत है पर स्वामी उसकी देख रेख ठीक प्रकार से नहीं कर सकता।

(१८३) संसार में अधिकार बहुत बुरी चीज है यह अनेक अनर्थ करा देता है।

(१८४) कृपण का धन ऐसे है जैसे खारी कूए का पानी। प्रथम तो वह जल पान करने के योग्य नहीं है यदि किया जाय तो अरुचि उत्पन्न होती है।

(१८५) भाषा भेद ने मनुष्यों में भी भेद डाल दिया है, वास्तव में समस्त मनुष्य एक हैं।

(१८६) भाई को नीचे गिरा कर आप कब तक ऊंचे रह सकते हैं ?

(१८७) क्या अधिक खर्च किये बिना बहू अच्छे बेटे न जनेगी ? याद रखें, धनवान भी बेटे के लिये तरसते हैं।

(१८८) पहिले राज्य की लड़ाई थी अब अनाज की है।

(१८९) पहिले ब्याज की लड़ाई थी अब मूलधन की है।

(१९०) गुणवान की जनता कदर नहीं करती तो इसका

अर्थ यह है कि उसने अपने गुण का दान नहीं किया उसको जनता कैसे जाने ?

(१६१) सतीत्व और सुन्दरता ही स्त्री का धन है।

(१६२) वैद्य की अपेक्षा ज्योतिषी की और ज्योतिषी की अपेक्षा पण्डित की क़दर कम रह गई है क्योंकि आधुनिक युग में अर्थ की मांग है परमार्थ की नहीं।

(१६३) सभा को दोष क्यों देते हो, नियम भंग करने वाले को दो।

(१६४) संसार का पेट भरे तब उसे ज्ञान की सूझे।

(१६५) आप गुलछर्रे उड़ायें और पड़ौसी भूखा रहे, यह चिरकाल तक नहीं चल सकता, वह कभी न कभी आपके हां डाका डालेगा।

(१६६) बहुओं को रोटी पकाना और लड़कों को कमाना नहीं आता, यही आज कल के खानदानों की तारीफ है।

(१६७) राजपूतों का काम केवल लड़ना तथा चोरी करना, ब्राह्मणों का मांगना तथा गाली देना और वैश्यों का काम धन कमाना और फिजूल खर्ची करना ही रह गया है।

(१६८) वह भाग्यवान है जो मरते समय मोहवश नहीं रोता और जिसके लिए उसके मरने के बाद कोई नहीं रोता अर्थात उसने किसी को कष्ट नहीं दिया और न किसी ने उसको कष्ट दिया।

(१६६) दान करना भी एक साम्यवाद-पोषक सिद्धान्त

है क्योंकि अधिक धन होने से दान स्वरूप ही सर्व साधारण में बांटा जा सकता है।

(२००) अपने प्राप्त अधिकारों को त्यागने वाला महा पुरुष है।

(२०१) हम अपने घर के खर्चों से स्वतन्त्र हो जायं तो आज देश, जाति का कार्य करते हुए पीछे हट नहीं सकते।

(२०२) पर्दे में रह कर स्त्री पर्दे के ही योग्य रह जाती है।

(२०३) इस सत्चित्त-आनन्द के विश्व में कोई दुख नहीं है परन्तु मनुष्य ने अज्ञानता से अपने लिये स्वयं दुख उत्पन्न कर लिया है। उन्हीं से घबड़ा कर संसार को दुखमय कहता है।

(२०४) हिन्दू लीक को पीटते हैं पर वास्तविक परिणाम को नहीं पहुंचते इसी हेतु बहु संख्यक होने पर भी पिटते हैं।

(२०५) दृढ भावना से ही जातीय संस्था जीवित रह सकती है।

(२०६) मजदूर क्यों बनता है, बादशाह बनने की चेष्टा कर, यह शक्ति तेरी आत्मा में विद्यमान है।

(२०७) हमने विदेशी वेष भूषा की नकल करके हानि उठाई है और उनकी कार्य शीलता तथा विद्या न सीख कर कोरे नक्काल बन गये हैं।

(२०८) "वैद्यकी हिन्सा न भवति"—इसका अर्थ यह

है कि वह दण्ड जो अपराधी को न्याय पूर्वक दिया जाता है, हिन्सा नहीं है।

(२०९) हमने समाज के पापियों को दण्ड देना त्याग दिया है केवल उसकी चर्चा करके ही रह जाते हैं। इससे पाप का व्यापार कैसे रुक सकता है ?

(२१०) यदि कलयुग टल नहीं सकता तो रोने से क्या लाभ ? और यदि टल सकता है तो इसका उपाय करना उचित है

(२११) काम न करने से खून का दौरा कम होता है और खून का दौरा कम होने से आयु कम होती है।

(२१२) क्रोध का शिकार बन कर यदि आपने घर पर रोब स्थापित किया है तो मैं आपकी प्रशंसा नहीं कर सकता। इससे तो यही अच्छा होता कि आप घर पर रोब कायम न करते।

(२१३) जातीय संस्था लड़ने के लिए स्थापित नहीं की जाती बल्कि सुधार तथा रक्षा के लिए की जाती है।

(२१४) आवश्यकतानुसार पदार्थों का संग्रह करें उससे अधिक संग्रह करना दुख के हेतु हैं।

(२१५) उत्तम बनने के लिए उत्तम कर्म आवश्यक हैं।

(२१६) जब तक आप तथा आपके आचरण उत्तम नहीं हैं तब तक उत्तम स्थान मिल नहीं सकता।

(२१७) पोल का मोल थोड़े दिन रहता है।

(२१८) सच्चा सच्चा ही रहता है चाहे उसे गड्ढर में ही क्यों न डालदो ?

(२१६) सहसा किसी का विश्वास नहीं करना चाहिए जब तक उसके आचरण की जांच न हो जाय।

(२२०) माल खाते जाते हैं और नुक्तेचीनी करते जाते हैं यही क्या भाईचारा है ?

(२२१) आजकल धनवानों में दान पुण्य बन्द है बीमार होने पर वे केवल डाक्टर को फीस देते हैं।

(२२२) संसार में मान के भूखे बहुत हैं ज्ञान के भूखे कम।

(२२३) हरामी और आलसी तो प्रारब्ध के गुणानुवाद गायगा पुरुषार्थ के नहीं।

(२२४) प्रारब्ध के प्रश्न ने संसार को उद्योगहीन बना दिया है।

(२२५) साम्यवाद सिद्धान्त का विद्वान समर्थन तो करते हैं पर अपनी सम्पत्ति कोई त्यागना नहीं चाहता।

(२२६) भारत में काम न करने का सिद्धान्त भाग्य अर्थात वेदान्त शास्त्र ने सिखा दिया है और तभी से दारिद्र और छलबल की बृद्धि हो गई है।

(२२७) अपनी रूखी रोटी खाना अच्छा है दूसरों के लड्डू खाना अच्छा नहीं।

(२२८) संसार खाऊ लुटाऊ है, किसी का धन सदैव

स्थिर नहीं रह सकता।

(२२६) भूखा कुत्ता रोटी छोड़ नहीं सकता, किसी की सलाह लेना व्यर्थ है।

(२३०) द्वेष की अग्नि भड़क रही है शान्ति का जल कहां तक डाला जाय ? वह तो जल कर ही रहेगी।

(२३१) सट्टे ने सेठाई और वोट ने अस्नाई खोदी।

(२३२) कर्जे ने भलाई और पंचों ने सचाई खोदी।

(२३३) धनवानों के पुत्र उनके नौकर ही हैं क्योंकि उनके अपने पुत्र तो उनकी सेवा करते ही नहीं।

(२३४) सत्य कर्म का मनुष्य अनुभव तो थोड़े काल में ही कर लेता है परन्तु उसके पालन में अड़चनें और रुकावटें बहुत आतीहैं।

(२३५) बहुत से मनुष्य ऐसे हैं जो अपने सिद्धांत को जनता के समक्ष प्रगट नही कर सके पर उनकी आयु का अन्त हो चुका है। जो अपने सिद्धान्त की सफलता को अपने जीवन में देख पाता है वही धन्य है।

(२३६) भारत वर्ष में यह अड़चन उपस्थित है कि किसी के पास पूंजी नहीं है और किसी के पास हुनर। यदि इन दोनों का परस्पर संयोग हो जाय तो कोई बेकार नहीं रह सकता।

(२३७) जो भाषण न दे सकता हो उसमें बुद्धि नहीं है और जो लेख नहीं लिख सकता, वह शिक्षित नहीं है।

(२३८) प्राय: लोग मान के लिए अड़ंगेबाजी करते हैं और कुछ खाने के लिए।

(२३९) किसी काम में रोड़ा अटकाना सहज है पर उसे चलाना कठिन है।

(२४०) किसी का आतिथ्य सत्कार किया निष्फल नहीं जाता।

(२४१) यदि बड़ा बनना चाहता है तो हाथ से दान और वाणी से ज्ञान दिया कर।

(२४२) जब समाज में ही जबर्दस्ती अन्याय होता है तो फिर सरकार को क्या दोष दिया जाय?

(२४३) पहिले अपना घर सावधान होगा तभी दूसरे को चुनौती दी जा सकती है।

(२४४) जो अपने स्वार्थ के लिए ईर्षा करता है अर्थात अपवाद करता है, वह पापी है और जो देश, धर्म और जाति के लिए करता है वह धर्मात्मा है।

(२४५) जाति का सुधारना ही अच्छा है, मारना नहीं।

(२४६) संगठन सुधार के लिए किया जाता है बिगाड़ के लिए नहीं।

(२४७) मेरी पार्टी वही है जिसके द्वारा जीव मात्र का कल्याण हो।

(२४८) हमें देश को जगाना है किसी के भय से सुलाना नहीं।

(२४९) स्त्री कोई ऐसा लुकमा नहीं है जो उन्हें कोई देखते ही खा जाय।

(२५०) स्त्रियों को ऐसा श्रेष्ट बनाना चाहिए कि वे किसी के जालमें न फंसें और अपनी यात्रा निर्भयता पूर्वक कर सकें।

(२५१) प्राय मनुष्योंको अपनी ही बात याद रहती है यदि वे दूसरों के स्वार्थों का भी ध्यान में रखें तो उनकी गणना देवताओं में हो।

(२५२) हमारे गुरू मूर्ख होने से हम भी मूर्ख रह गये हैं।

(२५३) दीपक से अंधकार दूर होता है। यदि आप अपने घर में जलायंगे तो आपके घर में उजाला होगा और मैं जलाऊंगा तो मेरे घर में।

(२५४) जगत की मजदूरी सभी को करनी पड़ती है चाहे जिस रूप में करनी पड़े।

(२५५) स्त्रियों को एकान्त में रहना तथा कर्म हीन होना उचित नहीं है।

(२५६) गुण्डों को मारने से उनका सुधारना कहीं अच्छा है।

(२५७) सस्ते माल के ग्राहक अधिक हैं किन्तु बढ़िया तथा तेज माल के कम, ज्ञान के सम्बन्ध में भी यही नियम लागू है।

(२५८) गम्भीरता के लेख अलमारियों में सुरक्षित हैं किन्तु साधारण पुस्तकें टके सेर बिक रही हैं।

(२५९) तू संसार को ज्ञान देने चल पड़ा किन्तु क्या तैंने देखा है कि तेरे पास पूंजी कितनी है।

(२६०) धन, पुत्र और स्थान उत्पन्न होने पर भी आत्मा को सुख नहीं है कारण आत्मा का आहार केवल विचार और सदाचार है।

(२६१) जो अपनी कमाई पर जीवन निर्वाह करता है वह ऋषि है।

(२६२) जो उत्तम कमाई से जीवन व्यतीत करता है वही देवता है।

(२६३) जो शून्य उपवाटिका में फल फूल नहीं तोड़ता वह ईमानदार है।

(२६४) जहर खाना सहज है किन्तु ईमानदारी रूपि अमृत पान करना कठिन है।

(२६५) मेरे पास रहने को पर्याप्त मकान हैं, भोजन को अनेक पदार्थ और व्यापार करने को धन राशि। फिर भी मेरी तृष्णा नहीं भरती। यदि विचार कर देखा जाय तो नवीन ज्ञान प्राप्त करना मुझे उचित है न कि पुरानी घिस घिस में पड़ा रहना ?

(२६६) टके लेने के लिये ज्ञान के चोंचले मुझे बहुत सुनाते हैं पर त्याग के लिये नहीं।

(२६७) हिस्सेदारों में ईमानदारी नहीं रही इसी लिए सम्मिलित व्यापार में अशान्ति फैली हुई है।

(२६८) आगत अतिथि का सत्कार करो, इससे आपकी

इज्जत नित्य प्रति बढ़ती जायगी ।

(२६९) अतिथि की सेवा व्यर्थ नहीं जायगी इससे आप का मान तथा कल्याण होगा ।

(२७०) मन्दिर है तो धर्मशाला और क्षेत्र है तो पाठशाला अलग बनाना व्यर्थ है ।

(२७१) यदि सार्वजनिक कार्य मन्दिर में नहीं हो सकते तो वह मन्दिर नहीं है ।

(२७२) मैं रामलीला करके लोगों को राम जैसे बनाना चाहता हूं, तमाशाई बनाना नहीं चाहता ।

(२७३) मनुष्य भोग लिप्सा और अज्ञान से उन्मत्त हो रहे हैं वे शास्त्रों का सदुपदेश कब सुनते हैं ?

(२७४) गन्दा तो यह शरीर है ही, इसे पवित्र रखने का ध्यान होना चाहिए ।

(२७५) फिजूल खर्ची बेईमानी की जड़ है और यह नर्क का द्वारा खोलती है ।

(२७६) कर्म सन्यास से कर्मयोग यों बड़ा है कि यदि समस्त जगत सन्यासी बन जाय तो फिर हल चला कर कौन अन्न उत्पन्न करेगा और अन्न न होगा तो जीवन कैसे चलेगा ?

(२७७) मनु ने भी कर्म से ही जाति-भेद माना है—दान लेना, दान देना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, पढना और पढाना आदि छः कर्म ब्राह्मण के बतलाये हैं जो इनको नहीं करता उसमें ब्राह्मणत्व नहीं है ।

(२७८) सतयुग में ब्राह्मणों का राज्य था उन्होंने ब्राह्मण "विष्णु" को अवतार माना। त्रेता में क्षत्रियों का प्राबल्य हो गया और रामचन्द्र क्षत्रिय को अवतार माना।

(२७९) आप भाई की नहीं मानते पर पंचायत की मानते हैं और धर्म से न मान कर डण्डे से मानते हैं।

(२८०) दण्ड के रुपये आप प्रसन्नता पूर्वक दे सकते हैं, परन्तु दान में नहीं।

(२८१) दान से मान भी होगा और कल्याण भी।

(२८२) दान यथार्थ रीति से होना चाहिए नाम की इच्छा के कारण अंधाधुंधी से नहीं।

(२८३) राज्य के लिहाज नहीं और समाज के लाज नहीं, फिर बतलाइये-धर्म कैसे टिके ?

(२८४) आपने पदार्थों का त्याग किया है परन्तु आपका मन किसी न किसी पदार्थ को देख कर ललचा ही जाता है।

(२८५) तीर्थों की शोभा श्रेष्ट मनुष्यों से है-अभ्यागत और मन्दिरों से नहीं।

(२८६) परोपकार का अर्थ है-बांट कर खाना।

(२८७) भक्तों को उच्चता और श्रेष्टता का अभिमान व्यर्थ है क्योंकि दूसरों की दया पर ही इनका जीवन निर्भर है।

(२८८) मारवाड़ियों को दान की सम्भाल नहीं है वे दान देना जानते हैं पर उसका सदुपयोग करना नहीं जानते।

(२८९) जिसकी ममता और तृष्णा निवृत्त होगई है वही

जीवन मुक्त है।

(२९०) यदि मनुष्य में मल न हो तो उसके देवत्व में क्या सन्देह है ?

(२९१) रात्रि को सोते समय अपने दिन भर के किये भले बुरे कार्यों पर विचार किया करो।

(२९२) एक रोज नामचा बनाना चाहिए जिसमें अपने अच्छे और बुरे कर्मों का हिसाब हो।

(२९३) नाम के अड़ंगे में फंस कर मनुष्यों ने आत्म गंगा का स्नान करना भुला दिया है।

(२९४) कर्म भेद से मनुष्य उच्च और नीच बने हैं।

(२९५) जाति भेद की नींव कर्मों के आधार पर है।

(२९६) अधिक बरसने से बाढ़ आती है और अल्प वर्षा से दुर्भिक्ष पड़ जाता है, अभिप्राय यह है कि ठीक ठीक दान देने से ही दान सफल होता है।

(२९७) संसार में अन्न, जल और वस्त्र दान करने वाले बहुत हैं किन्तु विद्यारूपि अमृत दान करने वाले बहुत कम हैं।

(२९८) औषधालय से विद्यालय का पुण्य अधिक है कारण औषधालय से केवल रोगों का ही जीवन सुधरता है किन्तु विद्यालय से सर्व साधारण का जीवन सुधरता है।

(२९९) निकृष्ट जाति होने से मनुष्य निकृष्ट-कर्म करने वाला हो जाता है अतएव जाति बंधन की आवश्यकता नहीं।

(३००) अच्छे और बुरे कर्मों का परिणाम अवश्य

मिलता है।

(३०१) जब हिन्दुओं में राण्ड हो जाती हैं फिर वे लड़ाई कैसे लड़ें ?

(३०२) लोभी के अरमान चिता पर शान्त होते हैं।

(३०३) पिता के धन और कीर्ति को स्थिर रखने वाला ही सतपुत्र है।

(३०४) जिसमें विद्या, तप और त्याग हो वही ब्राह्मण है।

(३०५) दिवाला निकल जाने पर साहूकार को उधार नहीं मिलता और आचार विचार हीन ब्राह्मण को दान नहीं मिलता।

(३०६) मनुष्य अन्य को नीचा दिखाने में ही अपने कर्तव्य का पालन समझता है, वास्तव में कर्तव्य का अर्थ भिन्न है।

(३०७) जो अपने हक पर कायम रहता है उसी के लोक, परलोक, दोनों सुधरते हैं।

(३०८) न्याय पर स्थित रहना महान पुरुषों का ही काम है।

(३०९) आजकल डाक्टर रोगियों को बुरी तरह लूटते हैं, परन्तु भूत काल में वे स्वयं धन व्यय कर रोग निवृत्त करते थे। देखिये भूत वर्तमान में कितना अन्तर है ?

(३१०) संसार में तीन मनुष्य ही बड़े हैं–विद्वान, धनवान, बलवान।

(३११) दुनिया में द्रव्य खर्चने से लाभ होता है और धर्म भी। फिर लोक परलोक क्यों न बनायें ?

(३१२) सत्यता पर निन्दा और स्तुति अथवा क्रोध कोई करे तो उस पर अपना सिद्धान्त कदापि न छोड़ें।

(३१३) जो पैतृक सम्पत्ति पर आलसी और लापरवाह हो जाता है वह मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता।

(३१४) शत्रु को सचेत करके प्रतिशोध लेना वीरों का ही काम है।

(३१५) ज्यादा लोभी नीचा देखता है।

(३१६) राजा के दरबार में सन्देहवान पुरुष दुख पाता है।

(३१७) जैसी संगत वैसी रंगत।

(३१८) जैसी बात वैसी ज़ात।

(३१९) भाग्य पर निर्भर होना दुर्बल मनुष्यों का काम है।

(३२० जो अपने आपको सब कुछ समझे किन्तु दूसरों को तुच्छ समझे वह अभिमानी है, आत्माभिमानी नहीं।

(३२१) तू अपने उद्देश्य को पूरा कर, इधर उधर मत देख।

(३२२) निर्बलता का नाम भी भलाई है।

(३२३) पेट भर सकता है किन्तु मन नहीं।

(३२४) जिस काम का परिणाम बुरा है उसका क्या

करना।

(३२५) मज़े में सज़ा है।

(३२६) भूल में क़ज़ा है।

(३२७) तू घर से बाहर निकल कर चल, तेरे साथी बहुत हो जायंगे।

(३२८) मनसूबे बांधने से कार्य-सिद्धि नहीं होती।

(३२९) लेखक जितना लिखे, उससे अधिक प्रचार भी करे ताकि उसकी विद्वता का पता जनता को लग सके।

(३३०) संसार में किसी को छोटा मत जान, यदि तू छोटे के हृदय को टटोलेगा तो उसमें अनेक रत्न प्राप्त होंगे।

(३३१) तू जिसका भेद जानना चाहता है, उसके निकट रहने लग जा।

(३३२) किसी के लिए पिञ्जरा मत बना, चाहे बेकारी में तेरा जीवन क्यों न समाप्त हो जाय।

(३३३) शत्रु को जोश न दिखा कर होश से बदला लें।

(३३४) समझौता तथा विश्वास तत्काल मत करो, कुछ समय लो।

(३३५) शत्रु की चाल देखो उसके सवाल नहीं।

(३३६) भूल का नाम ही जल्दी है।

(३३७) जिन पदार्थों की तृष्णा है वे सब काम नहीं आते।

(३३८) कविताई की अपेक्षा भलाई का प्रभाव बहुत

काल तक रह सकता है।

(३३९) काम में न आने वाले मनुष्य और पदार्थ को रद्दी के टोकरे में फैंको।

(३४०) काम से घिरे रहो, कामनाओं से नहीं।

(३४१) खर्च करके उस पर चिन्ता करना अथवा रुपये उधार लेना बुद्धिमानों का काम नहीं है।

(३४२) आज आपका समय है, कल मेरा समय भी आ सकता है।

(३४३) वह सोना किस काम का जिससे हानि हो।

(३४४) दुष्ट डण्डे से मानता है सत्कार से नहीं।

(३४५) बार बार क्षमा मत करो वरना तुम्हारे अधीनस्त मनुष्य भी तुम्हें भीरु समझेंगे।

(३४६) सीमा के बाहर कार्य करना हानिकारक है।

(३४७) किसी वस्तु को व्यर्थ मत समझो, सूअर भी सफाई का दारोगा है।

(३४८) यात्रा केवल दृश्य देखने के लिए नहीं है बल्कि उससे और भी लाभ उठाओ।

(३४९) वास्तविक भेद समझो, बाहरी आडम्बर में मत उलझो।

(३५०) मूर्ख और विद्वान का काम समान नहीं हो सकता यदि ऐसा हो तो विद्या से क्या लाभ ?

(३५१) पहिले श्रवण करो फिर मनन करके उत्तर दो।

(३५२) जल्दी बोलने से कार्य बिगड़ता है बनता नहीं।

(३५३) क्रोध करना सरल है पर बोध करना कठिन है।

(३५४) मोती के साथ मोती घिसना चाहिए पत्थर नहीं।

(३५५) अनुरोध करना सहज है प्रतिशोध करना कठिन है।

(३५६) अनुमोदन करना सहज है संशोधन करना कठिन है।

(३५७) आपने संसार में आकर क्या नवीन वस्तु प्राप्त की है।

(३५८) संघ में दुख भी है और सुख भी, इससे दोनों पक्ष सिद्ध होते हैं।

(३५९) जिस काम को आपने अच्छा समझ लिया है उससे पीछे क्यों हटते हैं ? यदि आप उसे अच्छा नहीं समझते तो जाने दीजिये।

(३६०) समाचार पत्र को अपना मित्र, पुस्तक को माता और लेखक को अपना पिता बनाओ।

(३६१) आजकल के ऋषी सम्पादक हैं।

(३६२) किसी का प्रस्ताव मानो चाहे न मानो, किन्तु अपना हिताहित देखलो।

(३६३) हे मनुष्य ! तू किसी का आश्रय क्यों ताकता है ? तू जनता की सेवा करता है, क्या तेरी कोई नहीं करेगा ?

(३६४) वीर पुरुष कार्य कर गुजरता है और कायर

सोचता रह जाता है।

(३६५) बदशक्ली भी मनुष्य को दुराचार तथा सांसारिक भार से बचाती है।

(३६६) धन के साथ बुद्धि का भी सदुपयोग करो।

(३६७) योरुप की फिजूल खर्ची और फैशन मत सीखो, उनका संयम और कार्य कुशलता सीखो।

(३६८) मनुष्य महेनत और खेती करता है, किन्तु पेट भर अनाज उसे नहीं मिलता, यह उसकी अज्ञानता है।

(३६९) किसी के अभिमान को मत देखो अपना अर्थ सिद्ध करने की चेष्टा करो।

(३७०) जो नौकर मालिक से आंख चुराता है वह काम का चोर है।

(३७१) सच्चा नौकर वही है जो स्वामी की हित चिन्ता करे।

(३७२) मुंह पर चुपड़ी बात कहने वाला कभी धोके में डाल देगा।

(३७३) स्वामी को सावधान रहना चाहिए मालिक के असावधान रहने से नौकर भी असावधान रहते हैं।

(३७४) धनवान को पुत्र की क्या आवश्यकता? उसके सारे काम नौकर ही कर देते हैं।

(३७५) दुष्ट का साथ बुद्धिमान ही निभा सकता है।

(३७६) रद्दी वस्तु को भी काट छांट कर उपयोगी

बनाओ ।

(३७७) प्रत्येक कार्य में दक्ष होने में बारह वर्ष लगते हैं ।

(३७८) लेने वाले मनुष्य को तो गर्ज होगी देने वाले को नहीं । यदि देने वाला गर्ज करेगा तो उसकी अवस्था चिन्ता जनक होगी ।

(३७९) जो अपने हितु और शत्रु को नहीं पहिचान सकता उससे अधिक मूर्ख कौन है ?

(३८०) द्वेष की बातों से प्रेम की बातें सुनना अच्छा है ।

(३८१) चश्मा लगाने से नजर तेज हो जाती है इसी प्रकार सत्संग के प्रभाव से ज्ञान की वृद्धि होती है ।

(३८२) धन की यथार्थ उपयोगिता मे ही आत्मा को शान्ति मिल सकती है ।

३८३) भलाई के साथ बड़ाई हो तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।

(३८४) जो रीतियां प्रचलित हैं वे किसी समय में उपयोगी थीं किन्तु अब वे ढोंग मात्र रह गई हैं । उनमें वास्तविकता नहीं रही ।

(३८५) जिनको धन और विद्या प्राप्त है वे पुरुष धन्य हैं ।

(३८६) श्रेष्ट और त्यागी पुरुषों की तलाश होनी चाहिए तथा उनको सुख पहुंचाने का प्रबन्ध होना चाहिए ।

(३८७) सब जगह लिहाज मुलाहिजे की कदर होती है ।

(३८८) जो नवयुवक उठकर पानी नहीं पी सकता वह काम क्या करेगा ?

(३८९) वही मनुष्य है जो अपना बोझा दूसरे पर न डाले।

(३९०) भीख देकर जाति का कार्य मत करो किन्तु अपना कर्तव्य समझ कर करो।

(३९१) धन जाने पर बुद्धि आती है, धन का नशा अन्धा है।

(३९२) सुधार से हमारा मतलब सुधारना है न कि निन्दा करना ?

(३९३) दुष्ट पिता, पुरोहित और गुरु को यदि दण्ड देना हो तो उनका सत्कार न करें।

(३९४) इस समय जो तुम्हारे अनुकूल है, वही कल तुम्हारे प्रतिकूल होकर क्या हानि कर सकता है ? इसका ध्यान रखो।

(३९५) आप जानते नहीं और दूसरों को मानते नहीं। बतलाइये उनका भला कैसे हो सकता है ?

(३९६) संसार में धन सर्वत्र विद्यमान है परन्तु वह यत्न और बुद्धि के बिना प्राप्त नहीं हो सकता।

(३९७) कर्ज देते समय मनुष्य का सदाचार देख लिया करें।

(३९८) उधार भी भले आदमी से लें।

(३६६) आपने पुरुषार्थ तो किया नहीं, पहिले ही भाग्य को रोने लगे।

(४००) पहिले काम को तीन बार, तीन दिन या तीन मास विचारलो तत्पश्चात् आरम्भ करो उसमें हानि होने की सम्भावना नहीं रहती।

(४०१) झगड़ा कसर खाने से निबट सकता है न कि शक्ति से?

(४०२) स्वार्थ के बिना तो पशु भी प्रेम नहीं करता, मनुष्य की तो बात ही क्या है?

(४०३) यदि देश, जाति का कल्याण चाहता है तो देश वासियों में शिक्षा का प्रचार कर।

(४०४) यदि तुम अपना बड़प्पन तथा मान चाहते हो तो जनता की सेवा करो।

(४०५) विद्वानों में एकता और संगठन नहीं है फिर अशिक्षितों को क्या कहा जाय?

(४०६) यदि तुम स्त्री जाति का कल्याण चाहते हो तो उनमें शिक्षा का प्रचार करो।

(४०७) अशिक्षित बिना स्वार्थ के काम कर सकता है, विद्वान नहीं।

(४०८) सच्चे मोती की सभी को अभिलाषा है परन्तु वह परिश्रमी गोतेखोर के ही हाथ आता है किनारे पर खड़े होकर देखने वाले के नहीं।

(४०६) दाम भी लो और अहसान भी लादो, यह कहां की बुद्धिमानी है ?

(४१०) पेट तो सभी भरते हैं परन्तु प्रतिष्ठा के साथ पेट भरना ही महत्व रखता है ।

(४११) यदि धन उपयोग में न आया तो वह भार रूप है ।

(४१२) मोह में क्रोध नहीं है प्रेम में बाध नहीं है ।

(४१३) लोभ में शोध नहीं है, काममें अनुरोध नहीं है ।

(४१४) चुग्गा डालने से चिड़िया जाल में फंसती है, बातों से नहीं । अर्थात मनुष्य को किसी से काम लेना हो तो पहिले उसे कुछ देकर प्रसन्न करे ।

(४१५) देनेसे भगवान भी प्रसन्न हो जाते हैं मनुष्य की तो बात ही क्या है ?

(४१६) देना ही सार है, मांगने वाला चाहे शत्रु ही क्यों न हो ।

(४१७) मेरा बन्धु और सम्बन्धी वही है जो कि मेरे समान आचार विचार रखता हो ।

(४१८) बिना कमाई के वस्त्र श्वेत नहीं रह सकते ।

(४१९) ईमानदारी रखनी हो तो खर्च कम करना चाहिए ।

(४२०) बालकों की अपेक्षा बूढे अधिक लालची होते हैं ।

(४२१) केवल सफेद वस्त्र पहिनने से कीर्ति नहीं मिल

सकती कीर्ति के लिए दान करना अनिवार्य है।

(४२२) जो अपने उत्तरदायित्व को तिलाञ्जली दे देता है वह सरासर पागल है।

(४२३) आवश्यकता और गुण पर ही मनुष्य नतमस्तक हो कर हाथ जोड़ता है।

(४२४) जो मनुष्य अपना काम स्वयं नहीं कर सकता उससे जनता की सेवा की आशा करना व्यर्थ है।

(४२५) जिससे अपने आचार विचार मिलें वही अपना भाई और पुत्र है।

(४२६) मनुष्य का घर ही उसका परिचय दे देता है कारण:—चतुर और मूर्ख का रहन सहन भिन्न है।

(४२७) जान कर ठगा जाना अनजान ठगे जाने से अच्छा है।

(४२८) जीव मात्र आराम चाहता है पर काम कोई बुद्धिमान ही करता है।

(४२९) ज्ञानी यदि अपने उपदेशों पर अमल नहीं करता तो उसका सत्कार स्थिर नहीं रह सकता।

(४३०) मूर्खों के बच्चे भी मूर्ख होते हैं।

(४३१) यदि आप अपना अपमान कराना नहीं चाहते तो अपने आचरण ठीक रखिये।

(४३२) अधिकार सिद्धांत को भुला देता है।

(४३३) लेखक तथा सम्पादकों का सत्कार होने से देश

में जागृति हो सकती है।

(४३४) पहिले ज्ञान है बाद में कर्म! कारण ज्ञान के बिना संकल्प नहीं हो सकता और संकल्प के बिना कर्म नहीं हो सकता।

(४३५) यदि आप ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो साधन करिये।

(४३६) अपने अधिकार को अधिकार मत समझो, किन्तु उत्तर दायित्व समझो।

(४३७) जब तक आप किसी से पूर्ण रूपेण परिचित न हो लें तब तक आप उससे अपने सिद्धान्त न कहिये।

(४३८) सिद्ध को साधक की आवश्यकता नहीं, यदि है तो वह सिद्ध नहीं है।

(४३९) बड़प्पन नम्रता और सेवा से बढ़ता है।

(४४०) विश्व में निकम्मी वस्तु कोई नहीं है प्रत्येक का गुण उसकी आवश्यकता पर ज्ञात होगा।

(४४१) समय पर काम न आने वाला मित्र, मित्र नहीं है।

(४४२) जो भोजन और धन खाकर भी सहानुभूति नहीं रखता उससे दूर रहना ही अच्छा है।

(४४३) किसी का अन्न खाकर उसकी निन्दा करने वाला कृतघ्न है।

(४४४) विद्वानों का सत्कार सभा में होता है; मूर्ख

मण्डली में नहीं।

(४४५) अधिक सरलता भोंदूपन का चिन्ह है।

(४४६) गुण्डापन दबाना प्रत्येक सभ्य का कर्तव्य है यदि कोई सज्जन इस से मुख मोड़ता है तो अपने कर्तव्य से गिरता है।

(४४७) दुर्गुणी मनुष्य को सम्मान देना पाप है।

(४४८) मनुष्य के आन्तरिक भाव, जाति और व्यवसाय उसकी बातचीत से जाने जा सकते हैं।

(४४९) आगत मनुष्य जल्दी करे तो समझलो कि इसमें धोका है।

(४५०) जिस देश में मूर्खों का मान हो, वहां विद्वान कैसे उत्पन्न हो सकते हैं।

(४५१) होसला ही मनुष्य का घोंसला है।

(४५२) जितनी बातें कहने में आती हैं उतनी करने में नहीं आतीं।

(४५३) शब्द-बाण कभी न कभी प्रभाव अवश्य डालेगा चाहे अच्छा हो अथवा बुरा।

(४५४) सबसे नम्रता का व्यवहार करो, आप भले कहलायंगे।

(४५५) यदि किसी की विपत्ति देख कर आपका हृदय द्रवित नहीं होता तो आपकी मनुष्यता और सम्पत्ति किस काम की?

(४५६) मिष्टभाषी के साथ सहसा होना नहीं चाहिए क्योंकि मीठी वाणी दग़ाबाजी की निशानी होती है; इसलिए पहिले उसके भाव देखें और विचारें कि वह ऐसी क्रिया क्यों करता है।

(४५७) मनुष्य को उचित है कि वह सदाचारी और विचार शील का साथ करे, किसी को रस्ते में पाकर उसको अपना साथी न बनाये।

(४५८) सांसारिक ज्ञानसे पुस्तकों का ज्ञान ही उत्तम है।

(४५९) जातीय सभा के साथ सहयोग जरूरी है।

(४६०) अपना स्वार्थ सिद्ध न होने पर निर्दोष वस्तु को दोषयुक्त बतलाना एक बहाने बाज़ी है।

(४६१) वह पथ क्या, जिस पर कोई पथिक न चलता हो? वह धर्म क्या, जिस पर कोई आरूढ न हो?

(४६२) हमारी दृष्टि से परे चाहे सोना कितना ही पड़ा हो, वह हमारे काम नहीं आसकता।

(४६३) बड़प्पन का रोग मनुष्य को बहुत तंग करता है।

(४६४) काम के लिए ही खर्च करना उचित है, नाम के लिए नहीं।

(४६५) मतलब के लिए पूछने वाले बहुत हैं, ऐसे कौन पूछता है?

(४६६) उन सन्तानों को जन्म देने से क्या लाभ? जिन्हें आप विद्वान और बलवान तथा सुयोग्य नहीं बना

सकते।

(४६७) बिरला सज्जन ही दुख में सहायता करता है।

(४६८) धन में धन सब डालते हैं निर्धन को कोई नहीं देता।

(४६९) एक वृक्ष लगा देना एक धर्मशाला बना देना है।

(४७०) याचक दाता की असमर्थता को न देख कर लेने का ही हठ करता रहता है।

(४७१) जिस खेती में सींचनेके लिए जल नहीं है उसमे फल लगना असम्भव है।

(४७२) काम कराने वाले चाहे आपको न मिलें परन्तु काम आपको सब जगह मिल जायगा।

(४७३) काम मृतकों में भी सचेतनता ला सकता है।

(४७४) फैशन का भूत सिर पर होने से कौन सुखी हो सकता है?

(४७५) निठल्ला रहने सेमनुष्य निकम्मा हो जाता है।

(४७६) काम न आने वाली वस्तु को आदर देने से क्या लाभ?

(४७७) नंगे शिर रहना आसान है पर शिर को ढांपना कठिन है।

(४७८) खाना उतना ही अच्छा है जितना खाने से पेट में दर्द न हो और न उसके खाने से किसी को कष्ट हो।

(४७९) बांट कर खाना ही उत्तम है।

(४८०) धन यदि सच्चा मित्र होता तो मरने पर साथ जाता।

(४८१) खर्च देखने दिखानेसे बढ़ता है इसलिए दिखावा नहीं करना चाहिए।

(४८२) मुफ्त के माल की सराहना न करके अपवाद करना उचित नहीं है।

(४८३) आने वाला आपके आचार और विचार देखेगा आप उसको सम्पत्ति और मकान दिखलाने की चेष्टा न करें।

(४८४) कर्जा लेने वाले तो साहूकार का प्रत्युपकार कर सकते हैं पर दान लेने वाले नहीं।

(४८५) मनुष्य जितना अपना कार्य करके प्रसन्न होता है उतना उससे अच्छा अन्य कार्य सिद्ध होने पर प्रसन्न नहीं होता।

(४८६) अपनी माता चाहे कितनी ही ख़राब क्यों न हो वह अच्छी ही लगेगी।

(४८७) भाग्य के भरोसे हथियार न डालो।

(४८८) मनुष्य चाहे जहां जाय, उसे कर्म करना पड़ेगा।

(४८९) धन शरीर का उद्धार कर सकता है और शिक्षा आत्मा का।

(४९०) यदि मृतक की स्मृति रखनी है तो बजाय मिठाई खिलाने के उपवास किया जाय, क्योंकि समवेदना का अर्थ है कष्ट सहना, न कि मौज उड़ाना?

(४९१) जो मनुष्य अनधिकार चेष्टा करता है वह

विजय नहीं पाना।

(४९२) सब जगह क्षमा काम नहीं देती, कहीं कहीं वीरता का परिचय देना भी आवश्यक है।

(४९३) आजादी कुछ और बात है बेशर्मी कुछ और।

(४९४) खोटे पुरुष से काम लेना किसी चतुर पुरुष का काम है।

(४९५) युग का दुख सुख रूपि चक्र तो यों ही चलता रहेगा जो कुछ तुझे करना है वह शुभ कार्य करले।

(४९६) झूठी सिफारिशों के लिए किसी की मुलाक़ात करना पाप है।

(४९७) बड़े की मुलाक़ात बड़प्पन के लिए होनी चाहिए न कि पतन के लिए?

(४९८) किसी के अनुग्रह से जीने के बजाय कष्ट उठा कर जीना अति उत्तम है।

(४९९) मनुष्य कृत-कानून जानने की अपेक्षा प्रकृति-कृत कानून जानना अति लाभदायक है।

(५००) योरुप के रेल, तार, बिजली आदि यन्त्रों के चमत्कारों ने भारतीयों को चकित कर दिया है, यहां तक कि वे भ्रमित होकर अपने सनातन कर्म को भूल गये हैं।

(५०१) नवीन विद्या प्राप्त करना कोई पाप नहीं है परन्तु धर्म को तिलाञ्जली दे देना पाप है।

(५०२) अधिकार में आये हुए धन को तो स्त्री भी बरत

सकता है, पुरुष वही है, जो उस धन से कुछ सत्कर्म कर दिखाये।

(५०३) शरीर की शोभा वाणी है और वाणी की शोभा कविता है।

(५०४) जैसा व्यवहार आपके माता पिता ने आपसे किया है वैसा ही आप भी अपनी सन्तानों से करेंगे।

(५०५) जैसा व्यवहार आप अपने माता पिता से करते हैं वैसा ही आपसे आपकी सन्तानें भी करेंगी।

(५०६) आम के आम होते हैं नीम के निम्बोली।

(५०७) विचारों को स्वतन्त्र रखना चाहिए किसी के दबाव और स्वार्थ से गन्दे न करें।

(५०८) कपट तथा छल करना उचित नहीं, कारण— इससे आत्मा मे अशान्ति और निर्बलता आती है।

(५०९) जिसका विश्वास जाता रहता है संसार से उसकी प्रधानता भी सदैव के लिए नष्ट हो जाती है।

(५१०) योरुप की उन्नति सब प्रकार बढी चढी है परन्तु भारत जैसा स्वादिष्ट भोजन अब तक नही बना सके।

(५११) बालकों को समझाना या पढाना सहज है पर बड़ों को समझाना कठिन हैं। जो बड़ों को समझा सकता है उसकी शिक्षा सफल है।

(५१२) बहुत से चालाक मनुष्य अपने दोष छिपा कर अगले को प्रसन्न कर लेते हैं।

(५१३) थोथी घुड़की बहुत दिनों तक नहीं चल सकती।

(५१४) धूर्त चाहे अपनी कितनी ही बड़ाई करे परन्तु उसका सत्कार कदापि न करें।

(५१५) धूर्त और मूर्ख का सत्कार करने से संसार में उनकी वृद्धि होती है।

(५१६) दक्षिणा लेकर काम करने वाला बड़ा है या स्वार्थ त्याग कर अर्थात दक्षिणा न लेकर काम करने वाला ?

(५१७) गुण्डे का आतंक हमेशा नहीं रह सकता, या तो वह अपने पाप पङ्क में आप ही फंस जायगा या उसको कोई सीधा करने वाला मिल जायगा।

(५१८) गुण्डे से प्रेम स्वार्थ से अथवा भय की अवस्था में ही किया जाता है।

(५१९) धन की आवश्यकता है तो उद्योग करो और ईश्वर की आकांक्षा है तो योग करो।

(५२०) जो मनुष्य भूल नहीं करता वह पूजने योग्य है।

(५२१) दुर्बल होकर विषय भोग में पड़ना मूर्खता है।

(५२२) संसार स्वार्थमय है, प्रत्येक अपने उपकार का बदला चाहता है।

(५२३) धैर्य्य की शिक्षा वैश्यों से प्राप्त करना चाहिए, कारण—उच्च जातियों द्वारा लाञ्छित होकर भी ये उनका सन्मान करते हैं।

(५२४) क्या शेखी न भगारने का नाम मुर्दापन है।

(५२५) जो दुकान का काम करता है वह धन प्राप्त करता है, जो घर का काम करता है वह रोटी, भाई का काम करने वाला स्वर्ग पाता है।

(५२६) स्त्रियों में शिक्षा होगी तभी कुरीतियों का सुधार हो सकता है।

(५२७) राज्य में न्याय, सन्यासी में त्याग, व्यापारी में नम्रता, पण्डित में सरलता, माता में ममता, दास में आज्ञा पालन और स्त्री में पतिव्रत न हो तो इनको बेकार समझना चाहिए।

(५२८) लिखना कठिन है, बोलना सुगम।

(५२९) मनुष्य यदि अपनी कमाई को अपने ही काम में लाने की चेष्टा करता है तो यह उसकी भूल है, कारण भरे हुए पानी के घड़े से पानी अवश्य बाहर गिरता है।

(५३०) ठगों से सावधान करना, गरीबों से प्यार करना, और आत्म सुधार करना मनुष्य के उपयुक्त कर्म्म हैं।

(५३१) उसी कार्य में हाथ डालना चाहिए, जिसमें आत्मा अथवा देश की उन्नति हो।

(५३२) गत इतिहास तभी कहना चाहिए जब उसके द्वारा कुछ लाभ हो।

(५३३) व्यंग वाक्य सुधार के निमित्त कहे जा सकते हैं किन्तु तकरार के लिए नहीं।

(५३४) यदि बड़ा होकर भूल में पड़े, तो छोटे को वह

क्या कह सकता है ?

(५३५) तेज चलने वाले को इनाम मिलता है, सुस्त को नहीं।

(५३६) जिसके पास अधिक सम्पत्ति हो उसे उचित है कि अधिक धन को बांटदे अथवा दान करदे।

(५३७) कृपण के धन का अन्त में नाश ही होता है, न वह भोग में आता है, न दान में।

(५३८) भाग्यशील का जीवन सन्मान और सुख में बीतता है।

(५३९) शूरवीर ही प्रतिवाद का सामना करते हैं।

(५४०) दूसरों के संकेतों पर चलना कभी बुद्धिमानी नहीं कही जा सकती।

(५४१) यदि आपने ठलुआ टोली में अपना नाम नहीं लिखाया, तो व्यर्थ में अपना और हमारा समय बर्बाद न करिये।

(५४२) मनुष्य को नचाने वाले बहुत मिल सकते हैं पर शिक्षा देने वाले बहुत कम।

(५४३) जनता का जिसे ध्यान है उसी को सच्चा ज्ञान है। अपने पेट का तो कूकर शूकर को भी ज्ञान है।

(५४४) दूसरे के अपमान के लिए तो सभी तैयार हैं पर सन्मान के लिए सज्जन ही तैयार होते हैं।

(५४५) डर कर काम करना अच्छा है, आराम करना

नहीं।

(५४६) कैसा अजब जमाना है कि विद्वान रूपि रत्न तो सस्ते हो गये और धनवान रूपि पत्थर महंगे।

(५४७) जो अपने कपुत्र पुत्र पर भी स्नेह रखता है उसमें पात्र परीक्षा की बुद्धि दुर्लभ है।

(५४८) योग रूपि बोतल में ज्ञान रूपि अमृत भरा पड़ा है, मैंने उसे अमृत समझ कर पान किया, परन्तु औषधि समान फल मिला, अमृत तुल्य नहीं।

(५४९) मैं यह तो निश्चित कर चुका हूं कि यह रत्न है पर उसके मूल्य को अब तक नहीं आङ्क सका हूं।

(५५०) तूने पढ कर क्या चमत्कार दिखाया? कागज़ तो सभी काले कर सकते हैं।

(५५१) उपदेशकों की वाणी की अपेक्षा पुस्तकों में अधिक ज्ञान है, परन्तु श्रोता प्रायः अशिक्षित होते हैं इस कारण वक्ता पर मुग्ध हो जाते हैं।

(५५२) विद्या और तप, यह दोनों राग परक हैं केवल त्याग वैराग परक है।

(५५३) अपनी आवश्यकताएं कम करना भी सर्व श्रेष्ट त्याग है।

(५५४) आप मान चाहते हैं, और मैं ज्ञान।

(५५५) भाग्य के भरोसे बैठ कर अभागा क्यों बनता है?

(५५६) बालक वृद्ध में मैत्री न होने का मुख्य कारण

यह है कि बालक भावहीन और वृद्ध कान्ति हीन होते हैं इस लिए परस्पर संकोच करते हैं।

(५५७) सांसारिक पुरुष सम्पत्तिशाली को मान देते हैं, त्यागी को नहीं।

(५५८) मनुष्य को आपत्ति में ही महात्मा की आकांक्षा होती है क्योंकि सांसारिक साधनों से हताश हो कर वह कातर हो उठता है।

(५५९) वस्त्र शुद्धि की अपेक्षा शरीर शुद्धि पर ध्यान दो। वाणी की शुद्धि की अपेक्षा आत्म शुद्धि और कर्तव्य पालन उत्तम है।

(५६०) यात्रा में वस्तु को अपने निकट रखना चाहिए जिससे भूल या खोने का भय नहीं रहता।

(५६१) सांसारिक पदार्थों को बिगाड़ने वाले अधिक हैं सुधारने वाले थोड़े।

(५६२) मनुष्य की ज्ञान वृद्धि रुक जाने का मुख्य कारण यह है कि वह नूतन अमृत से घबराता है और पुरातन विष के पीछे पड़ा हुआ है। नया मार्ग-निर्माण तो अलग रहा, उसके पीछे भी चलना नहीं चाहता।

(५६३) मूर्ख और विद्वान में भेद इतना ही है कि मूर्ख से कोई बात तक करना नहीं चाहता और विद्वान जहां जाता है वहीं आदर पाता है।

(५६४) यह कैसे हो सकता है कि हम भरते जायं और

आप जीवित रहें; क्या आपको हमारी आवश्यकता नहीं है ?

(५६५) विचारवान सभी पदार्थों का उपयोग करता है आचारवान पुरातन रीति को ही पकड़े बैठा रहता है ।

(५६६) मैं आपके ज्ञान और तेज से भयभीत नहीं होता हूं किन्तु आपसे छोटा होने के कारण आपके समक्ष नवता हूं ।

(५६७) आपने मुझे सदैव दबाया ही है कभी सराहा नहीं, यही मेरे छोटे होने का पाप है ।

(५६८) आप मृतकों की बात चीत करते हैं और मैं जीवित जनों की पुरातन पुरुषाओं के गीत गाने से क्या लाभ ? जब तक तदाचरण कर हम स्वयं सुयोगी नहीं बनते ?

(५६९) संसार नवजीवन-दाता साम्यवाद है ।

(५७०) बड़ी आयुवालों को शान्ति का पाठ और युवकों को उद्योग का पाठ पढ़ाना चाहिए क्योंकि वृद्ध काम नहीं कर सकते और युवक शान्त नहीं रह सकते ।

(५७१) बड़ा तो पहाड़ है जिसका सत्कार कहीं भी नहीं और छोटे से रत्न को राजा महाराजा अपने शिर पर स्थान देते हैं । गुण ही प्रधान है गुरुत्व होने से पूछ नहीं ।

(५७२) लोग सत्य ही पसन्द करते हैं और उसकी चाह से उसके पास जाते भी हैं पर बहुत देर तक टिके नहीं रहते । इसी से सत्य उनसे प्रेम नहीं करता ।

(५७३) नाम के लोभ में यदि कोई काम करता है तो

न करने वालों से वह भी अच्छा है, उससे किसी का भला तो होता है।

(५७४) संसार के पदार्थ छोड़ने तो सभी पड़ते हैं यदि पहिले से छोड़दें तो नाम हो और आराम मिले।

(५७५) बड़ों का सन्मान करो और युवकों को उठाओ।

(५७६) बुरे कामों से घृणा करो, जाति विशेष से नहीं।

(५७७) दुखी भाई के सेवक बनो धर्म-पतित के नहीं।

(५७८) ब्राह्मण वही है जो ब्रह्मपरायण हो।

(५७६) ऋषियों की झोंपड़ियों की सी शान्ति और ज्ञान बड़े बड़े कॉलिजों में मत ढूंढो, वहां तो दुःख, अशान्ति का राज्य है।

(५८०) यदि ज्ञान सम्पादन करना है तो मकान की शान मत देखो।

(५८१) अंग्रेजी भाषा पढ लेना ही आज शिक्षा समझी जाती है चाहे छात्र कितना ही सदाचार भ्रष्ट क्यों न हो जाय।

(५८२) प्राचीन विद्यार्थी वनों में कन्दमूल पर रह कर निर्वाह करते थे आज अंग्रेजी के विद्यार्थियों को जेब ख़र्च को ही दो रुपये रोज़ाना चाहिएं।

(५८३) मैं आप जैसा क्रोधी नहीं हूं, घरवालों से लड़ता नहीं हूं, फिर बतलाइये मैं आप जैसा—घर वालों पर रोब कैसे जमा सकता हूं?

(५८४) तू सब से दबेगा तो भला कहलायगा।

(५८५) एकदम दान करके धन वितरण न करे, ज्यों २ पात्र मिलते जायं त्यों त्यों देता जाय।

(५८६) जो किसी को तंग देख कर द्रवित हृदय नहीं करता है उसकी सम्पत्ति किसी काम की नहीं।

(५८७) सदाचारी मनुष्य का जीवन निर्भयता और सुख पूर्वक व्यतीत होता है। उसकी सज्जनता पर विश्वास और प्रसन्नता की जाती है और दुराचारी का दुखमय, अपमान युक्त और तानों का जीवन होता है।

(५८८) आपके स्वास्थ्य युक्त जीवन से हमें क्या लाभ? यदि धार्मिक कार्य में पुरुषार्थ करें, तो एक पन्थ दो काज बन सकते हैं।

(५८९) माता पिता की अपेक्षा गुरु बड़ा है जो ज्ञान प्रदान करता है। गुरु की अपेक्षा ईश्वर, जिसकी आराधना गुरु भी करते हैं।

(५९०) एक पिता के दो पुत्र हैं—एक तो सेवा करता है वह तो हुआ भक्त और जो धन कमा कर कुटुम्ब का पालन करता है वह है—ज्ञानी। अब आप बताएं, पिता का प्यार किस पर अधिक होगा?

(५९१) आश्रम एक द्विजाति बनाने का स्थान है।

(५९२) सोने का सिक्का चोर को न दिखला कर सराफ को दिखलाइये जो उसके गुण दोष की परीक्षा कर सके।

(५९३) मैं पुस्तकों का ग्राहक हूं, मान का नहीं।

(५६४) लाग बुरी है पर आग अच्छी।

(५६५) पढना सरल है, समझना कठिन और अन्य को समझाना महा कठिन है।

(५६६) मैं सद् ग्रन्थों का चाहक हूं शब्द जाल का नहीं।

(५६७) मैं जीवनोपयोगी-साहित्य का मधुकर हूं साम्प्रदायक करील का नहीं।

(५६८) जिसके सिर पर ग्रन्थों का भार अधिक है और हृदय में सार नहीं है, वह मूर्ख है।

(५६९) हमने बाबा लेने के वास्ते बनाया है, देने के वास्ते नहीं।

(६००) प्रारब्ध और परलोक के लिए आप चाहे कुछ भी कहदें, यह हमारे से दूर की बात है।

(६०१) निष्पक्षपात होकर देखना चाहिये कि किसका सिद्धांत सच्चा है।

(६०२) जो बात समझ में आजाय, उसे दूसरे पर नहीं छोड़ना चाहिये।

(६०३) कुछ बुद्धि से भी काम लोगे, या योंही तेली के बैल की भान्ति कर्म कोल्हू के फेर में घूमते रहोगे?

(६०४) मैं गुण्डों का बाबा और शरीफों का दास हूं।

(६०५) मैं हूं तो भोला पर धन होने से स्याना समझा जाने लगा हूं।

(६०६) मैं आपका सुधारक शत्रु हूं बिगाड़क मित्र नहीं।

(६०७) निष्काम सेवकों को तथा विद्वानों को दान देना कठिन है।

(६०८) बालकों का गुरु अध्यापक है और बड़ों का उपदेशक।

(६०९) धन तो हरेक के पास हो जाता है पर सरस्वती के सिंहासन पर बैठने की शक्ति बिरलों में पाई जाती है।

(६१०) ब्राह्मणों के सिवाय कोई भी ऐसी जाति नहीं है, जो दान न देती हो।

(६११) चाहे पण्डित हो या बाबू,-जो पुस्तक रचना नहीं करता है वह पठित होते हुए भी निर्बुद्धि है।

(६१२) फैशन शरीर के लिए है न कि फैशन के लिए शरीर ?

(६१३) वह पोजीशन (इज्जत) किसी भी काम की नहीं जिससे अस्तित्व जाता रहे।

(६१४) सोना सोना ही है और मुलम्मा मुलम्मा, क्योंकि बिना धन के थोड़े दिन बाद इज्जत भी नहीं रह सकती।

(६१५) साधारण कोटि के मनुष्य एक कालिक भोजन प्राप्त कर ही सन्तुष्ट हो रहते हैं।

(६१६) विद्वान संस्था में पद प्राप्त कर अथवा चन्दा प्राप्त करने पर प्रसन्न हो सकते हैं।

(६१७) सिद्धान्त पर स्थिर रहना किसी महान व्यक्ति का काम है, सर्व साधारण का नहीं।

(६१८) अन्धकार मे रख कर आप मुझे उल्लू बनाना चाहते हैं, क्या मै इन चाल बाजियों को नहीं जानता ?

(६१९) वर्तमान काल मे तो भाग्य का भेद खुल जाता है पर भविष्य का आतंक जमा रहता है।

(६२०) शरीर की परिस्थिति ठीक रखने के लिए कर्म करना आवश्यकीय है।

(६२१) आत्मा के लिए ज्ञान की आवश्यकता है और पेट के लिए रोटी की।

(६२२) स्वार्थ को छोड़ देना किसी महात्मा का काम है, साधारण मनुष्य का नहीं।

(६२३) मोटी अक्ल के आदमी तो बहुत मिलते है परन्तु सूक्ष्म तत्व समझाने वाले कम।

(६२४) वैश्य जाति समस्त जातियों मे एक जगमगाता हीरा है।

(६२५) वैश्य जाति क्या है एक बिना ताल का मर्जीरा है।

(६२६) वैश्य जाति एक गुड़ का शीरा है, इसे चाहे जो खाले।

(६२७) वैश्य जाति का पेट सब ने चीरा है क्योंकि यह एक कोमल मतीरा है।

(६२८) न इसका वतीरा है न कोई जातीय टण्डीरा है, खाली एक खाने के योग्य जीरा है।

(६२६) पढना उसका ही सार्थक है जो सभा में उपदेश कर सकता हो और लेख भी लिख सकता हो।

(६३०) वह अमृत किसी काम का नहीं, जो अजीर्ण करे। वह इज्जत किसी काम की नहीं, जिससे दरिद्रता बढे।

(६३१) बिना ज्ञान के शान किसी काम की नहीं।

(६३२) मैं काम करने वाले आदमी बनाना चाहता हूं, निकम्मे नहीं।

(६३३) मुझे शब्दों की विवेचना नहीं करनी, बल्कि पदार्थों की करनी है, अर्थात पेड़ न गिन कर आम खाने हैं।

(६३४) मैं जागृति भाव से मनुष्य की तलाश में हूं।

(६३५) ज्ञानी पर भी दुष्कर्म का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।

(६३६) मनुष्य को थक जाने पर भाग्य को याद करना चाहिए, पहिले नहीं।

(६३७) भाग्य का मन्त्र कोई काम की चीज नहीं है, वह कायरता और आलस्य की वृद्धि करता है।

(६३८) भाग्य का विधान अनाथ बालक तथा अबलाओं के सन्तोष के लिए बनाया गया था न कि युवक और सामर्थ्य-वानों के लिए?

(६३९) भाग्य का फल स्वयम प्राप्त हो जायगा, उसका विचार करना व्यर्थ है। जो अपनी भलाई का काम है वह कर।

(६४०) वर्तमान काल में सम्पादक मेरे गुरु हैं।

(६४१) देश की जीवन-शक्ति शिक्षालयों तथा सभाओं में है।

(६४२) अभी तक अंधकार का ही युग है, क्योंकि विद्वानों का उतना भी मान नहीं, जितना मूर्खों का है।

(६४३) पहिला दर्जा विद्या का है, दूसरा धन का।

(६४४) यद्यपि धन के बिना काम नहीं चलता तथापि यह नहीं माना जा सकता, कि धन होने से विद्या की आवश्यकता नहीं।

(६४५) क्या आपका फोटो आपके सदृश सक्रिया-चेष्टा अर्थात कार्य कर सकता है? यदि नहीं तो चित्र-प्रेमी क्यों बनते हो?

(६४६) विद्वानों का भारत मे सत्कार नहीं, तभी तो देश मे दरिद्रता और रोगो का निवास है।

(६४७) जब खाये बिना शरीर नहीं रह सकता तो बिना कमाये धन कैसे रह सकता है?

(६४८) धन दान देने वाले तो आपको बहुत मिलेंगे परन्तु ज्ञान दान देने वाले बहुत कम।

(६४९) जो शत्रु के साथ भी शत्रु-भाव नहीं रखता वह मित्र के साथ तो रख ही कैसे सकता है?

(६५०) मित्र बनाने का लाभ काम पड़ने पर मालूम पड़ता है, पहिले नहीं।

(६५१) झगड़ा पड़ने पर भाई याद आते हैं, पहिले कोई

नहीं पूंछता।

(६५२) भाई तो भाई ही रहेगा और सब झूंठा नाता।

(६५३) मैंने सैद्धान्तिक कवच धारण कर रखा है, इससे मुझे निन्दा स्तुति रूपि वायु (गर्म सर्द) नहीं लगती।

(६५४) मनुष्य भूख के डण्डे से जितनी जल्दी झुकता है—राज्य के डण्डे से नहीं।

(६५५) पुराने मित्र को नवीन मित्र मिलने से नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि नवीन मित्र के गुण दोषों का अभी आपको परिचय नहीं है।

(६५६) आधुनिक काल में पुत्र पिता से नहीं डरता, फिर गुरु से कब डर सकता है?

(६५७) धन एक जीवन का साधन मात्र है, इससे अधिक नहीं।

(६५८) हे जीव! तू शुभ कर्म नहीं करता परन्तु सुख के लिए लालायित फिरता है, ऐसे सुख प्राप्त कैसे हो?

(६५९) मर्द वही है जो अपनी कमाई खाता है। जो पराई कमाई खाता है, वह नपुंसक है।

(६६०) इस संसार में तपस्वी कौन है?—एक विधवा स्त्री। जो अपना धर्म पालन करती है। विधवा के तिरस्कार में।

(६६१) आजकल व्यभिचार कहां है?

(६६२) मेरे बाँधव और सम्बन्धी वही हैं जो मेरे समान आचार विचार रखते हों।

(६६३) फिजूल खर्ची ने किसको तबाह नहीं किया ?

(६६४) विद्वान को सकल पदार्थ करतलगत रहते हैं और मूर्ख से दूर।

(६६५) आकाश की बातों का पता लगाइये, पृथ्वी की बातों का पता लगाना कठिन नहीं है।

(६६६) जितना धन प्रमाद और गफलत में जाता है। उतना खर्चने से नहीं।

(६६७) धनवान के आंख नहीं होती परन्तु कान चार होते हैं।

(६६८) क्या आपने वकालत झूट बोलने के लिए पढ़ी थी, अथवा सत्य के निर्णय के लिए ?

(६६९) डाक्टर के दिलमें रहम कैसे हो ? उसको धन का लोभ है।

(६७०) मैं विद्वानों की वाणी सुनना चाहता हूं, बहरा बन कर रहना नहीं।

(६७१) जो कार्य मनुष्य बारम्बार करता है वह उसको पसन्द है, यही मनुष्य की मनोवृत्ति की पहिचान है।

(६७२) अन्धे के आगे रूप हीन अपने सौन्दर्य की प्रशंसा कर सकते हैं।

(६७३) नौकर बहुत मिलते हैं पर मालिकी लेने वाला कोई नहीं।

(६७४) पुरातन वस्तु बहुत काल तक नहीं रह सकती.

अधिक पुरानी होजाने पर उसे फैंक देना ही पड़ता है। जब हम नवीन हैं तो पुरातन वस्तु सिर लादे क्यों फिरें, क्या वह अच्छी लगेगी ?

(६७५) स्वार्थ में दूर से ही दुर्गन्धि आती है और परमार्थ में सुगन्धि।

(६७६) बदमाश मनुष्य से भलाई की आशा रखना मूर्खता है।

(६७७) संसार में कैसी विचित्रता उपस्थित हो रही है, सन्तान हीन तो सन्तान न होने को रोते हैं और सन्तान वाले उनकी फिजूल खर्ची को।

(६७८) सन्तान हीन पुरुषों के पश्चाताप का उस समय अन्त हो जाता है जबकि वे अपने भाइयों को स्व सन्तानों के दुराचार से दुखी देखते हैं।

(६७९) मुझे धन खोये जाने का कोई पछितावा नहीं है। अपितु दुराचार का परिणाम मिल गया, यह सन्तोष की बात है।

(६८०) मेरे दिल में बदमाश की इज्जत नहीं है, चाहे उससे मेरा कितना ही काम क्यों न निकलता हो।

(६८१) गुरु ने विद्या दी और हमने धन दिया, फिर अहसान किस बात का ?

(६८२) विद्वानों का सत्संग तो बहुत अच्छा है परन्तु उनके साथ रह कर जीवन व्यतीत करना कठिन है।

(६८३) मूर्खों के साथ रह कर प्रतिष्ठा तो खूब होती है, परन्तु आनन्द नहीं आता।

(६८४) खेद है कि मेरी पुस्तक को किसी ने नहीं पढ़ा तदर्थ सुन्दर २ वाक्य दीवारों पर लिखने पड़े।

(६८५) संसार भडुओं पर रीझता है तत्व वेत्ताओं पर नहीं।

(६८६) मनुष्य दूसरों को अपने पक्ष में करना चाहता है किन्तु उनके हित की ओर ध्यान नहीं देता।

(६८७) आप मृतकों का क्या अफसोस करते हैं, क्या आप मरेंगे नहीं ?

(६८८) संसार आज बाहरी तड़क भड़क को देखता है गुण को नहीं।

(६८९) एक वीर के बिना यह कितना बड़ा क्षेत्र खाली पड़ा है।

(६९०) ताजा शिकार खाने में कुछ हिम्मत की जरूरत है।

(६९१) जो संसार को अपना घर समझता है वह परोपकार कर सकता है।

(६९२) विषय की अपेक्षा नाम के रस में अधिक आनन्द आता है।

(६९३) विषय रस का अन्त है, नाम रस का नहीं, क्योंकि वह अनन्त है।

(६९५) वस्त्र देख कर किसी की बुद्धि का निश्चय नहीं करना चाहिए, जब तक कि वार्तालाप न हो।

(६९५) आप अपना मान चाहते हैं, तो लोभ का त्याग दीजिये।

(६९६) धन की आवश्यकता है तो विद्याओं को प्राप्त करो।

(६९७) पहिले खर्चने में आनन्द आता है फिर वही जान का बबाल हो जाता है।

(६९८) परिणाम मिलने पर जो मनुष्य सावधान होता है, वह दूरदर्शी नहीं।

(६९९) जहां गधा घोड़ा एक भाव बिकता है वहां शिक्षा रत्नों की परीक्षा नहीं।

(७००) स्त्रियां क्या जानती हैं,-खाना और लड़ना।

(७०१) असली बात का परखना किसी चतुर पुरुष का काम है।

(७०२) रिश्तेदार की सारी आयु में एक बार भलाई जांचलें नित्य प्रति नहीं।

(७०३) गुण की अपेक्षा सम्बन्ध को आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

(७०४) उत्तम सम्बन्ध से कुल की शोभा होती है।

(७०५) सभा एक पंचायत का दूसरा स्वरूप है। जब पंचायतों में सभ्यता और विवेक नहीं रहा तब विद्वानों ने

सभाओं की स्थापना की ।

(७०६) सभाओं में यह कमी है कि दिखावा अधिक और काम थोड़ा होता है ।

(७०७) जो व्यक्ति में ऐहलौकिक ही मुक्ति नहीं कर सका वह शिष्य को क्या दिला सकता है ?

(७०८) ब्राह्मणों से साधु यों बड़े हैं कि उनमें तप और त्याग की मात्रा अधिक है ।

(७०९) साधुओं की अपेक्षा ब्राह्मणों में विद्या विशेष है, इसी से अब तक वे गौरव की दृष्टि से देखे जाते हैं ।

(७१०) क्षत्रिय लोग इतने गिर गये हैं, कि उनको उधार मिलना भीं कठिन है ।

(७११) क्षत्रियों में ऐंठ तो अब तक भी है पर गुण नहीं रहे ।

(७१२) वर्ण विभाग संसार के कार्य क्रम को बोधक है न कि ऊंच नींच का ?

(७१३) वर्ण विभाग से ही जनता में शान्ति का राज्य हो सकता है ।

(७१४) गृहस्थी साधु की तलाश नहीं करता सिद्ध की तलाश करता है ।

(७१५) साधु अपने पैर पुजाना चाहता है ईश्वर के नहीं ।

(७१६) जिसको मृत्यु और क्षुधा का डर हो उसको साधु

नहीं होना चाहिए।

(७१७) गृहस्थी को मौत और आपत्ति का डर है और साधुओं को भूख का।

(७१८) किसी से बिना संग किये उसके हृदय की बात का अनुमान करके बैठ जाना भूल है।

(७१९) शत्रु से हित की बात सुन कर भी विश्वास न करें।

(७२०) तीन रात्रि पास रहे बिना किसी का विश्वास न करें।

(७२१) जो सभाओं से भागता है वह परोपकार नहीं कर सकता।

(७२२) दूसरा भूल करता है तो आप भी भूल करें यह बुद्धिमानी नहीं है।

(७२३) वर्तमान काल में अंग्रेजी भाषा धन कमाती है और संस्कृत भाषा धर्म सिखाती है।

(७२४) हमारे साधू कम्बल क्यों ओढते थे, इसका रहस्य यह है कि काले रंग का ऊनी वस्त्र दीर्घ कालतक खराब नहीं होता था।

(७२५) टोपी, पगड़ी आदि देश की जल वायु के अनुसार पहिरना है।

(७२६) मैं कर्मों का आप उत्तरदाता हूं किसी अन्य पर भार लादना नहीं चाहता।

(७२७) मैं सीमा में रहना चाहता हूं सीमा (हद) से बाहर नहीं।

७२८) मैंने अच्छी तरह से अनुभव किया है कि भूल का परिणाम दुःख मिलेगा।

(७२९) सच्चे की पहिचान भी देर में होती है इस लिए उतावले मत बनो।

(७३०) आपने अपने घर में दीपक को जगा लिया परन्तु किसी दूसरे को भी जगाया ताकि आपके प्रकाश को देखे।

(७३१) कसौटी पर असल नकल की पहिचान होती है जबान पर नहीं।

(७३२) जाति व्यवस्था से सुख और आत्म रक्षा की व्यवस्था सुगम होजाती है।

(७३३) वेदों में इतिहास नहीं है यह कौन कहता है?

(७३४) वेदों में इतिहास है तभी तो हम उन्हें सृष्टि के आदि से नहीं मान सकते।

(७३५) साहित्य मनुष्य के हृदय पर अधिकार करता है और राज्यसत्ता प्राकृतिक पदार्थों पर।

(७३६) जमानत लेने की अपेक्षा जमानत के रुपये देने अच्छे हैं।

(७३७) विधि पूर्वक दान देश में विद्वानों और सुखों की वृद्धि करता है अन्यथा दान दुर्व्यवहार और भिक्षुकों की।

(७३८) जहां तक हो सके, शत्रुता घटानी चाहिए, बढ़ानी नहीं।

(७३९) यदि लड़ने से दुष्टता का नाश होता है तो अवश्य डट जाना चाहिए।

(७४०) अपना नाम तो सभी ऊंचा करना चाहते हैं परन्तु देश और जाति का नाम ऊंचा करने वाले विरले ही होते हैं।

(७४१) फिजूल खर्ची का अर्थ समझने में गफलत मत करो।

(७४२) हाथों का काम बातों से नहीं चल सकता।

(७४३) जो ढूंढता है वह मूंडता है।

(७४४) निशाना साधते रहो, सफलता अवश्य मिलेगी।

(७४५) यदि पहिले की तैयारी अच्छी है तो काम शीघ्र बन जायगा।

(७४६) नौकर को मुंह लगाने से काम बिगड़ जाता है।

(७४७) नौकर के साथ रुखाई का व्यवहार भी काम बिगाड़ देता है।

(७४८) सच्चा तो सच्चा ही होता है और झूठा झूठा ही।

(७४९) संगठन का अर्थ यह है कि आत्म-रक्षा और आत्म-सुधार करना न कि किसी पर अवैध आक्रमण करना?

(७५०) भारत के जन समाज का आधा अंग बेकार पड़ा है क्योंकि बहुत सी स्त्रियां शिक्षिता होकर आय का धन्धा नहीं करतीं।

(७५१) मनुष्य की होशियारी इसमें है कि गृह का पालन भली भान्ति करे और खर्च काट कर लाभ दिखाये।

(७५२) खर्च करने में अधिक बुद्धि की आवश्यकता नहीं। क्योंकि खर्च का रास्ता दिखाने वाले स्वतः ही मिलते रहते हैं।

(७५३) पोल पट्टी बहुत दिन नहीं चल सकती। पाखण्डियों को सचेत होकर भविष्य के लिए अभी से अन्य कोई प्रबन्ध करना चाहिए।

(७५४) धनवानों का धन इसी लिए खर्च होजाता है कि वे कमाना छोड़ देते हैं और अपने लेन देन को सम्भालते नहीं।

(७५५) नहीं करने का फल नहीं है।

(७५६) 'हां' कहने पर जोर पड़ता है, प्रथम सोच कर फिर किसी को बचन दें।

(७५७) बचन का पालन करना कठिन है और धन देना सहज है।

(७५८) भूमि रत्नों से भरी पड़ी है उनको खोजने वाला और देखने वाला चाहिए।

(७५९) बिना हाथ हिलाए तो रोटी भी नहीं खाई जाती।

(७६०) जो पुत्र पिता की आज्ञा पालन नहीं करता, वह कैसा पुत्र? वह तो शत्रु है।

(७६१) गृहस्थ में सारी उम्र चिपटे रहना बुद्धिमानी नहीं है अन्तिम अवस्था में परोपकार और आत्म सुधार अव-

श्य करना चाहिए।

(७६२) आराम की बेड़ी मनुष्य के पैरों में पड़ी हुई है फिर भला वह कैसे कष्ट कर परमात्मा को ढूंढे।

(७६३) मनुष्य को नित्य प्रति नूतन ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

(७६४) दुर्व्यसनी मनुष्य प्रशंसा के भूखे होते हैं।

(७६५) मुकाबले में धन फूंकना हठी मनुष्य का काम है।

(७६६) धीर पुरुष के हाथ में चांदी है और तेजस्वी के हाथ में स्वर्ण।

(७६७) ब्राह्मण, क्षत्रिय को जो मनुष्य धन, नमस्कार अथवा उन्हें दबाने के कारण कुछ देता है यह उसकी भूल है। उनसे तो इतना ही आशा करें कि वे आपका अहित न सोंचे।

(७६८) जो घर का काम करे वह घर में बड़ा है और जो देश का काम करे, वह देश में बड़ा है।

(७६९) माया मिथ्या कैसे ?—उसके बिना तो सन्यासी का काम मरने तक भी नहीं चल सकता।

(७७०) यह बात सत्य है कि मायावी मनुष्य ईश्वर तक नहीं पहुंच सकता।

(७७१) निखट्टू सदा चण्डू पीया करते हैं।

(७७२) हम सभ्यता का नमूना पतलून को मानते हैं पर वह जमीन पर बैठने से मना करती है।

(७७३) सादगी में यह मजा है कि वह किसी जगह भी मना नहीं करती।

(७७४) चन्दा मांगना बुरा है तो संस्थाएं कैसे चलें ?

(७७५) तपस्या खेती के समान है जैसा बीज बोओगे, वैसा ही फल पाओगे।

(७७६) जिसके जितने अधिक सुमित्र होंगे उसका उतना ही अधिक मान होगा।

(७७७) सचाई रूपि रत्न को जोहरी ही परख सकता है, हर एक नहीं।

(७७८) इधर उधर रत्न बिखरे पड़े हैं उनको एकत्रित कर हार बनाना किसी जोहरी का ही काम होता है।

(७७९) बिना विचार परिवर्तन किये सिद्धान्त कैसे स्थिर हो सकता है ?

(७८०) किसी के अपने अनुभव रखना पाप है, तो मैं भी पापी हूं।

(७८१) मूर्ख बढ़िया वस्त्र दूसरों को रिझाने को पहिनते हैं।

(७८२) पिता के कूप का खारा पानी पीते रहना, अन्य का मीठा जल न पीना, हठ नहीं, तो क्या है ?

(७८३) निस्वार्थी का आसन चक्रवर्ती नृपति के राज्य से कई गुणा ऊंचा होता है।

(७८४) त्याग से तप और विद्या का रंग खिल उठता है।

(७८५) इस समय द्रव्य-दान की अपेक्षा जीवन-दान की अधिक आवश्यकता है।

(७८६) अपनी राय के विरुद्ध हरकत करना आत्म-घात के समान है।

(७८७) बाजार में सौदा अनेक प्रकार का है परन्तु मैं अपनी आवश्यकतानुसार तथा मन पसन्द ही खरीदता हूं।

(७८८) नई रौनक पर सभी दौड़ते हैं पुराने साधन पर कोई नहीं।

(७८९) जो नित्य प्रति खा पीकर सोजाते हैं उनके जीवन में नई बात क्या है?

(७९०) जो किसी जाति का अपमान करता है उसका अपमान सब जातियों द्वारा होता है।

(७९१) पाप के द्वारा धनोपार्जन कर, पाप के काम में लगाना, यह मूर्खता नहीं तो क्या है?

(७९२) हे साधुओ! जब आप बाबा बन गये तो फिर बाप क्यों बनते हैं? यह आपका स्वरूप नहीं है।

(७९३) उत्तम कार्य को ही लक्ष्य बनाओ।

(७९४) शत्रु रूपि श्वान के बांधने के लिए हाथी की बेल चाहिए।

(७९५) जितने बन्धन अधिक लगायेगा उतना ही काम अधिक मजबूत होगा।

(७९६) ढीला-कबीला "भगवान की लीला" ही कहता

पायगा।

(७६७) जिसने अपने कर्तव्य को समझ लिया उसका भविष्य उज्ज्वल समझो।

(७६८) हाथी तो मारा नहीं जाता, चूहे के कान काटते हो। बस यही वीरता है?

(७६९) थके हुए का साथ कौन दे?

(८००) गृहस्थी तो क्या, आज कल तो साधु भी स्तुति निन्दा में अधिक काल खर्च कर रहे हैं।

(८०१) अपना अपमान कोई नहीं चाहता, चाहे वह कितना ही नीच क्यों न हो?

(८०२) प्यार से मार खा सकता है क्रोध से नहीं।

(८०३) जो जीव मात्र का भला चाहता है उसे दलबन्धी से क्या प्रयोजन?

(८०४) सब से भला रहना तथा मित्रता रखना कठिन है।

(८०५) शिष्य बनने आते हैं परन्तु गुरु बनने कोई नहीं आता अर्थात गुरु के लक्षण अपने में धारण नहीं करता।

(८०६) साधु स्थूल माया को त्याग कर अलभ्य पदार्थ की खोज में चला था परन्तु कुछ काल के बाद फिर वापिस वहीं पर आ बैठा।

(८०७) संसार एक कसोटी है, इस पर क्या साधु क्या गृहस्थी सभी कसे जाते हैं।

(८०८) हमारा उद्देश्य किसी को मारना नहीं सुधारना है।

(८०६) गन्दे गीत मत गाओ-क्योंकि गन्दे गीत करे फजीत।

(८१०) गन्दे आचरण और खोटे व्यवहार से बुद्धि मलीन होती है।

(८११) बहुधा मनुष्य खाने खिलाने में ही प्रश्न होते हैं।

(८१२) लोभ से डरो क्रोध से नहीं।

(८१३) काम से डरो दाम से नहीं।

(८१४) नौकर और भिक्षुक दोनों आप से धन लेते हैं, पर अन्तर इतना ही है कि एक प्रत्यक्ष भला करता है और दूसरा गुप्त।

(८१५) स्वार्थी और परमार्थी में इतना ही अन्तर है कि यह घर कुटुम्ब का पालन करता है और वह विश्व भर का।

(८१६) शहरों में आधे बेईमान और चालाक मनुष्य रहते हैं।

(८१७) भारत की मध्य-कालीन-झलक ग्रामों में अब तक मिल सकती है।

(८१८) पत्थरों का ढेर पड़ा है पर रत्न कहीं कहीं छिपे हुए हैं।

(८१६) शरीर के साधन तो यथेष्ट संग्रह कर चुके, कुछ आत्मोन्नति के साधन भी जुटाये हैं, या नहीं?

(८२०) यदि रक्षा न की जाय तो यह आयु १०० के ६० में ही समाप्त हो सकती है।

(८२१) जो पिता के विचारों की पुष्टि नहीं करता, वह पुत्र कहलाने का अधिकारी नहीं।

(८२२) निकम्मे लड़ा करते हैं, काम वाले नहीं।

(८२३) पञ्चायत से विश्वास इसीलिए उठ गया कि पञ्च न्यायी नहीं रहे।

(८२४) अहंकार मनुष्य को डबोता है। यदि अहंकार छोड़ कर न्याय की शरण गहोगे तो आपकी विजय होगी।

(८२५) यदि संसार में सभी पुरुष सदाचारी हो जायं तो अदालतें और जेलखानों अस्तित्व ही न रहे।

(८२६) बहुत से लोग मान के भूखे होते हैं, न्याय के नहीं।

(८२७) अवसर पर संयम रखना किसी महापुरुष का काम है।

(८२८) धन को खानदानी ही रख सकता है, बैनुआ नहीं।

(८२९) जब तुम्हारी ही वासनाओं का नम्बर नहीं टूटता तो अन्य को वासना त्याग का उपदेश देना मूर्खता है।

(८३०) दुष्ट समझाए से न माने तो मारना ही पड़ता है।

(८३१) मांगने में भी चातुर्य की आवश्यकता है।

(८३२) गुरु पद तो गुणवान और सदाचार को ही दिया जायगा।

(८३३) आटे में जीव उत्पन्न हो जाता है, आटा जड़ वस्तु है, उस मे चेतन की उत्पत्ति कैसे? यदि इसी प्रकार जड़ से चेतन उत्पन्न हो जाय तो कैसे?

(८३४) वीर्य-विकारों से बुद्धि में विकार आजाता है।

(८३५) जिसका वीर्य दृढ होगा वही प्रतिज्ञा पर दृढ रह सकता है।

(८३६) बुद्धिमान भी विचार पर दृढ रह सकता हैं बिना बल के अपने विचार को कार्य में परिणित नहीं कर सकता।

(८३७) ऋषियों ने साइंस के कार्यों को हितकारी न समझ कर आविष्कार नहीं किये।

(८३८) ज्याफत क्या है? किसी को भोजन कराकर प्रसन्न करना है इससे सस्ता कोई साधन नहीं।

(८३९) शिक्षा द्वारा लौकिक-ज्ञान प्राप्त होता है योग द्वारा पारलौकिक।

(८४०) खोटे खरे की पहिचान बुद्धिमान का काम है।

(८४१) रात को उल्लू बोलते हैं, हंस नहीं।

(८४२) पक्षपात में न्याय का ध्यान नहीं रहता।

(८४३) जो श्वासों को परखता है, वह जीवन का मूल्य जानता है।

(८४४) श्वासों के आधार पर ही हमारा जीवन खड़ा है।

(८४५) श्वासों की क्रिया जानने से विश्व का ज्ञान होता है।

(८४६) पांचो यज्ञ करना गृहस्थ का प्रायश्चित है।

(८४७) यज्ञों का नमूना दिखाने से काम अच्छा नहीं होगा सम्पूर्ण यज्ञ करना ही उचित है।

(८४८) जाति का पक्ष करो परन्तु दुराचारी का नहीं।

(८४९) वाणी का हथियार क्रोध है।

(८५०) सभी मनुष्य लाभ चाहते हैं और उन्हें हो जाती है हानि। इसमें क्या रहस्य है ?

(८५१) बहुमत बुद्धिमान को भी परास्त कर देता है।

(८५२) विचारवान सकल विश्व को अपने आधीन कर सकता है।

(८५३) नेतागिरी यदि आराम की वस्तु बन गई है तो बहुत दिनों तक पूजी नहीं जा सकती।

(८५४) पूजा से पूंजी बढाना पाप है।

(८५५) महात्माओं जितनी ही अपने सुखों को तिलाञ्जली दी उतना ही जनता को सुख मिला।

(८५६) यदि कोई कार्य करनेमें बिलम्ब करदे तो सहसा उस पर सन्देह मत कर बैठो।

(८५७) वीर पुरुष अपने विचार को कार्य रूप में परिणित कर देता है और आलसी वहम करता हुआ ही बैठा रहता है।

(८५८) शत्रु से मुकाबला करना हो तो एक की जगह दस साधन हाथ मे रखो।

(८५९) संसार में यह देख कि तेरे कौन २ हैं। कहीं सभी दाम के यार तो नहीं हैं।

(८६०) जो भविष्य का निश्चय नहीं करता है वह वर्तमान काल में व्यर्थ श्रम कर रहा है।

(८६१) शत्रुओं की हंसी पर अपना मार्ग मत छोड़ो।

(८६२) जो संसार के प्रलोभनों को छोड़ चुका है वही परमार्थवाटिका की सैर कर सकता है अन्य नहीं।

(८६३) निकम्मा वही है जो घर में लड़ता आता है और घर वालों को रुलाता है।

(८६४) आप ६४ घड़ी संसार को देखते रहते हो क्या कभी एक घड़ी अपने आप को भी देखते हो, या नहीं ?

(८६५) ईश्वर से और जिसके ऋणी हो उससे डरो।

(८६६) अन्यायी से भय तात्कालिक ही रहता है सार्वकालिक नहीं।

(८६७) अधिक धन बढ़ने से यदि बैर बढ जाय तो ऐसी धनवृद्धि से क्या लाभ ?

(८६८) जो सन्तान-वृद्धि से अधिक पाप में रक्त हो गया, तो ऐसी सन्तान बृद्धि से क्या लाभ ?

(८६९) भूखा तो बेईमान हो सकता है पर धनवान ईमान न रखे तो बडी शर्म की बात है।

(८७०) व्यवसाय से ही वर्ण और जातियो का विकास हुआ है।

(८७१) एक ही विषय को शाब्दिक-भेद से वर्णन करना कोई नई बात नहीं है।

(८७२) शिक्षा के बिना नर वानर है वह सर्व साधारण को हानि ही पहुंचायगा।

(८७३) दुखियों को दुख देना अच्छा नहीं।

(८७४) मनुष्य सेवा कर सकता है पर ठोकरें नहीं खा सकता।

(८७५) बुरा करने वाले का बुरा मत सोचो, उससे सावधान अवश्य रहो।

(८७६) यदि यह मान लिया जाय, कि खुशामद से ही काम निकलता है तो फिर योग्यता प्राप्त करना व्यर्थ है।

(८७७) दुष्ट के साथ दुष्टता का व्यवहार करना गृहस्थी का काम हो सकता है, साधु का नहीं।

(८७८) दण्ड देना राजा का धर्म है, साधु का नहीं।

(८७९) जिसका मस्तिष्क बिगड़ जाता है उसका सभी शारीरिक प्रबन्ध बिगड़ जाता है।

(८८०) सत्य को सत्य कहना कोई निन्दा नहीं है।

(८८१) सत्य को प्रिय बना कर कहना साधारण कोटि का काम है।

(८८२) संयम से भूख कम सताती है पर निवृत नहीं हो सकती।

(८८३) यदि भूख न लगे तो सन्यासी को गृहस्थी का

दर्वाजा न खटकाना पड़े।

(८८४) यदि मौत का भय न हो तो सन्यास की चिन्ता न रहे।

(८८५) नेकी करना विवेकी का काम है।

(८८६) बदी करना बद का काम है।

(८८७) नेकी का फल आज नहीं तो कल अवश्य मिल जायगा।

(८८८) धोका देना महा पाप है।

(८८९) इन्कार करने से दूसरे को दुःख अवश्य होगा पर धोके से कई दर्जे अच्छा है।

(८९०) विष देदे पर विश्वास न दे।

(८९१) जिसकी रोटियों में स्वाद न आये, तो समझलो वहां प्रेम की कमी है।

(८९२) नागरिकों को प्रबन्ध करना आता है परिश्रम करना नहीं।

(८९३) मनुष्य में गुण की आवश्यकता है लिहाज की नहीं।

(८९४) काम न करने पर भी किसी पर अहसान धरना चालाकी है।

(८९५) संसार मुकाबले को मानता है समता को नहीं।

(८९६) लड़ाई से गर्भ को चूर किया जाता है।

(८९७) मनुष्यकी सुस्तीसे ही उस पर जबर्दस्ती होती है।

(८९८) मेम्बरों के निर्वाचन में मतदाताओं की बुद्धि की परख होजाती है।

(८९९) जहां भलाई करने वालों को नामर्द और बुराई करने वालों को मर्द कहा जाय वहां गुण्डापन की वृद्धि होकर सज्जनों का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है।

(९००) राम-भक्त वही है जो राम के समान गुण-ग्राही हो।

(९०१) भला करते भी बुरा होता है तो होने दो अर्थात दाल रोटी खाते भी घाटा होता है तो क्या किया जाय?

(९०२) मजाक के सिर पर बन्दर की टोपी है।

(९०३) शूद्र के उदर है दिल नहीं।

(९०४) द्विजातियों में अभिमान है किन्तु गुण नहीं।

(९०५) सबको काबू में रखना बुद्धिमान का काम है।

(९०६) धौंस थोड़े दिन चलती है और होश सदैव काम आता है।

(९०७) सौ जगह से तो एक ही जगह ईमान डिगाना अच्छा है।

(९०८) स्थिर सिद्धान्त ही मनुष्य को ऊंचा उठाता है।

(९०९) अपने विचारों को कार्य में परिणित करो तभी लोगों को आपके विचारों का पता लगेगा।

(९१०) शुभ कार्य में स्थिर रहना किसी महापुरुष का काम है।

(६११) पब्लिक का काम अपना ही समझने से पार पड़ता है, दूसरे का समझने से नहीं।

(६१२) धनवान और गरीब में यही भेद है कि एक अपने विचारों को कार्य रूप में परिणत कर सकता है, दूसरा नहीं।

(६१३) जिसमें अच्छे बुरे का विचार नहीं वह दलबन्दी किसी काम की नहीं।

(६१४) काम करने से ईमान का पता लगता है।

(६१५) पकी पकाई खाने को संसार तैयार है पर पका कर खाने को नहीं।

(६१६) जो दिन में सूर्य को नही देखते हैं उन्हें रात्रि में पछताना होगा।

(६१७) किसी व्यक्ति विशेष की ओट में जाति विशेष का मुकाबला मत करो।

(६१८) सिफ़ारिशें सभी झूठी नहीं होतीं प्रायः डर और वहम के कारण होती हैं।

(६१९) देश का ऊंचा उठाना और मनुष्यों को पवित्रता की शिक्षा देना सन्यासियों और वान प्रस्थियों का कर्तव्य था।

(६२०) शत्रुता भी करो तो उन्नति मूलक करो, अवनति मूलक नहीं।

(६२१) विद्वान परिणाम को पहिले समझ लेता है, और मूर्ख बाद में।

(६२२) काम न करना होशियारी नहीं है अपितु नादारी और बीमारी का बुलावा है।

(६२३) जो स्वहितैषियों को शत्रु समझता है संसार में उस से बढ कर कई मूर्ख नहीं।

(६२४) अपने हाथ से फोड़े पर चाकू नहीं चलता कोई दूसरा ही ऑपरेशन करता है।

(६२५) जो देश सेवक और जाति सेवक को शत्रु समझता है उससे बढ कर भ्रान्त कौन हो सकता है।

(६२६) जो अपने हानि-लाभ को नहीं समझता, वह मूर्ख है।

(६२७) जो दूसरे के आगे हाथ नहीं पसारता वही समझदार है

(६२८) अपने चन्दे का धन्धा कर रखा है अथवा देश हित का कार्य ! इसमें मुझे सन्देह है।

(६२९) धूल में रत्न पड़े हैं, नीचे झुककर तलाश करो।

(६३०) संसार स्वार्थ को देखता है, यथार्थ को नहीं।

(६३१) वक्त का हथियार हर कोई हो सकता है पर सदैव का हथियार विरला ही बनता है।

(६३२) अपने शत्रु को प्रेम से जीतो, कटु वाक्यों से तथा पशुबल से नहीं।

(६३३) वाह, यह तुम्हारा ज्ञान अच्छा है, जिससे रोटी कपड़ा भी प्रतिष्ठा पूर्वक प्राप्त न हो सके।

(६३४) यदि आप दूसरों का अन्न वस्त्र लेंगे तो आपको भी दूसरों को लाभ पहुंचाने को बाध्य होना पड़ेगा।

(६३५) जो जनता अपना स्वरूप समझती है वह सृष्टि का धन भी अपना समझ कर भिक्षा ले सकती है।

(६३६) जो भिक्षा अथवा चन्दे के धन से सांसारिक भोग भोगता है वह अवश्य नर्क का भागी होगा।

(६३७) राजा से प्रेम तो सभी करते हैं परन्तु रंक से प्रेम करना महत्व की बात है जो करता है वही दीन-बन्धु कहलाने का अधिकारी है।

(६३८) मुंह लगा बालक और भेदी नौकर तथा स्वतन्त्र नारी, कपटी भ्राता, दुराचारी माता, यह सब दुखदायक हैं।

(६३९) चित्त एकाग्रता का नाम समाधि है।

(६४०) प्रारब्ध-भोग का फल भविष्य में कैसे और क्या होगा ? यदि कोई बतला सकता है तो प्रारब्ध माना जा सकता है नहीं तो यह बात प्रमाणिकता नहीं रखती कि जो हो जाय उसी को प्रारब्ध कह देना।

(६४१) विद्या तो स्वर्ण का सिक्का है जो सब जगह चलता है, पर तप त्याग जवाहिरात है उसको जानकार ही खरीदेगा।

(६४२) कारीगरी चांदी का सिक्का है जो सर्व साधारण में बहुत ही चलता है।

(६४३) मनुष्य की भावना में कितना अन्तर है कि

कभी तो एक अधेले के लिए दस रुपये का सौदा वापिस ले लेता है और कभी दस रुपये बिना कोई मुआवजा लिए पुण्यार्थ दे सकता है।

(६४४) संसार में देना कठिन है, यदि कोई दे दे तो उसे भुगताना कठिन है; क्योंकि आलस्य अथवा बे समझीमें दानका सदुपयोग नहीं हो सकता।

(६४५) भारत में दान की व्यवस्था ठीक नहीं रही और न लेने वालों की नीयत अच्छी रही।

(६४६) याचक बड़े से बड़ा दान लेने को तैयार रहता है किन्तु यदि उससे कोई एक पैसे की चीज मांगे तो वह कदापि नहीं दे सकता।

(६४७) धर्मशाला में जमादार गरीब मुसाफिरों को जगह नहीं देते क्योंकि उन्हें नौकरी के अतिरिक्त इनामों अथवा किराये के दामों की प्रबल इच्छा रहती है।

(६४८) धर्मस्थान को धर्मात्मा सज्जन बना छोड़ते हैं परन्तु मैनेजर (व्यवस्थापक) उसका दुरुपयोग करे तो स्वामी को एक्शन भी लेना चाहिए।

(६४९) चाहे आप बाजार देखें, मन्दिर, मठ देखें उनमें अन्धकार अधिक है, प्रकाश थोड़ा।

(६५०) जब हम वर्तमान व्यवहार को ठीक नहीं रख सकते तब परलोक को क्या शुद्ध रख सकते हैं।

(६५१) जितनी हमने आवश्यकताएं बढ़ाली हैं उतना

ही दुःख बढ़ा लिया है।

(६५२) बिना कमाई के शरीर रूपि दुकान कैसे चलेगी ?

(६५३) आप पहाड़ों में जाकर छिप गये हैं, इससे चाहे आपका भला हो जाय. परन्तु जनता की रक्षा नहीं हो सकती।

(६५४) वैद्यों का नखरा और धनवानों की मुलायमी का मुकाबला करके देखना चाहिए। उन्हीं से पोषण होता है और उन्हीं को लूटते हैं।

(६५५) वैश्यों जैसी मुर्दा जाति विश्व में नहीं है।

(६५६) दुष्ट समझाने से नहीं मानता, वह डण्डे से मानता है।

(६५७) भले मनुष्य को मुर्दा कहना कितनी नीचता है ?

(६५८) चाहे आप कितने ही मकान बनालें, सोना तो आपको केवल ढाई गज की जगह में है।

(६५९) आप चाहे जितना धन जोड़लें, काम तो थोड़ा ही आयगा। यदि अधिक धन होगा तो अन्य को उधार देना पड़ेगा।

(६६०) कायर दान लेकर प्रसन्न होता है और सूम क्षमा कर।

(६६१) बटाऊ का माल लुटाऊ समझ कर सभी चोंच मारते हैं।

(६६२) अतिथि की सेवा निष्फल नहीं जाती आप कुछ

दिन करके अनुभव करलें।

(६६३) आज कल बिना मतलब के सेवा होनी कठिन है परन्तु जो निस्वार्थ सेवा भाव रखते हैं, वे धन्य हैं।

(६६४) तड़क भड़क में आप चाहे लाखों रुपया फूंक दें उसमें परमार्थ नहीं।

(६६५) जिससे दोनों लोक में कल्याण हो, उसका नाम परमार्थ है।

(६६६) आप स्वयं भूखा रह कर बालकों को मोहन भोग खिलाता है वह श्रेष्ट नवयुवकों की वृद्धि करता है।

(६६७) देखो हमने आपको पढाया है और साथ ही भोजन प्रदान किया है। उसका उपभोग कर आप कहीं नौकरी करने लगे इस प्रकार आपने हमारे उद्देश्य को क्षति पहुंचाई है। हम तो चाहते थे कि आपके द्वारा धर्म, जाति और देश का उद्धार हो।

(६६८) यद्यपि धर्म दान करने से पुत्र और धनादि की प्राप्ति हुई परन्तु पुत्र सदाचारी न निकला और उसके द्वारा धन पाप में लग गया तो उससे क्या कल्याण होगा।

(६६९) अपने अपने स्थान पर सभी काम ठीक ठीक हों तभी आनन्द और सुख प्राप्त होता है।

(६७०) जो मनुष्य सदैव लड़ता रहता है वह मनुष्य नहीं है एवम हिन्सक पशु है।

(६७१) ईश्वर ने आपको संसार रूपि बगीचा रक्षा करने

के निमित्त सौंपा है बिगाड़ने के लिए नहीं।

(६७२) जो लेख नहीं लिख सकता और सभा में बोल नहीं सकता उसकी विद्वता पंगु है।

(६७३) माता पिता के कष्ट में सम्मिलित होने वाली कन्यायें अधिक हैं।

(६७४) जो अनजान अतिथियों की सेवा करता है वह देवता है।

(६७५) कल क्या होने वाला है? इसका पता लगाना कठिन है।

(६७६) चीज की आवश्यकता हो तो बाजार से खरीदलो परन्तु सम्बन्धी से मुफ्त लेने का विचार न करो।

(६७७) जो आपत्ति में काम न आये वह सम्बन्धी नहीं।

(६७८) बुरी अवस्था मनुष्य की सदैव नहीं रहती उससे अच्छा बर्ताव करना चाहिए।

(६७९) जो बार बार धोका देता है वह चाहे प्रिय पुत्र ही क्यों न हो, उससे घृणा हो जाती है।

६८०) दान के लिए जिसका हाथ ऊंचा है संसार में उसका नाम भी ऊंचा है।

(६८१) मनुष्य मनुष्य तो सब एक ही हैं पर उनमें नेकी और बदी का अन्तर है।

(६८२) रूढि के दास कितने अन्धे हैं कि जातीय सभा तो हित की बात कहती है, वे उलटी समझते हैं।

(९८३) यदि आपको सुखी होना है तो सभा की आज्ञाओं का पालन करो, सभा में सम्मिलित रहो और विद्वानों की संगति करो।

(९८४) जो मूर्ख भविष्य के परिणाम को नहीं समझते वे खाने खिलाने को ही धर्म समझे हुए हैं।

(९८५) मनुष्य हर समय उन्नति की इच्छा रखता है परन्तु उन्नति का समय कभी कभी आया करता है।

(९८६) जिसमें जो गुण होगा, वह छिपा नहीं रहेगा।

(९८७) लिफाफा तो प्राप्य स्थान तक लेजा सकता है पर अन्त में चिट्ठी ही काम आयगी।

(९८८) धनवान बड़े २ कार्यों में धन व्यय करते हैं परन्तु फिर भी उनकी प्रशंसा नहीं होती इसका कारण यही है कि वे धन का उचित उपयोग करना नहीं जानते।

(९८९) मैं ऐमालों से बंधा हूं ख्यालों से नहीं।

(९९०) ज्ञान और सौंदर्य में कोमलता है तथा शक्ति में कठोरता।

(९९१) विद्वानों की हंसी भी सुधार का गंगाजल है।

(९९२) धनवानों के पूंछ तो उत्पन्न होगई थी अब सींग भी दिखलाई देने लगे हैं।

(९९३) जेष्ट मास की कड़कती धूप में किसान का हल जोतना एक तपस्वी से अधिक तपस्या है।

(९९४) भविष्य का ज्ञान नहीं है इस लिए मनुष्य

अपनी कमजोरी को समझता हुआ अज्ञात शक्ति से दबता है।

(९९५) अनजान की सेवा करना महा पुण्य का कार्य है।

(९९६) जिसके घर में माल नहीं है, उसको बाहर भी नहीं मिलता।

(९९७) मनुष्य जितना कार्य कर सकता है उतना ही करेगा। डराने धमकाने से वह अपनी शक्ति और योग्यता से अधिक कार्य नहीं कर सकता।

(९९८) काम करने के पश्चात आत्मा को सुख और शान्ति मिलती है, खाली बैठने से नहीं।

(९९९) जो मनुष्य अपने काम पर डटा रहता है वह मर्द है।

(१०००) भूगोलका तो पता ला सकता है पर जब खगोल का पता लाये तब बुद्धिमानी है।

शुभम्



हमारी प्रकाशित पुस्तकें।

(१) हिन्सा करना हिन्दू धर्म नहीं।
(२) गौमाता की प्रार्थना।
(३) सन्त-सेवा।
(४) वैश्य सुधारक कुण्डली।
(५) वैश्य जाति स्तोत्र।
(६) दान रहस्य।
(७) दान व्यवस्था।
(८) गन्दे गीतों का बहिष्कार।
(९) अग्रवाल सुधार गायन।
(१०) जागृति।
(११) वैश्य कॉलिज की अपील।
(१२) ब्रह्मचर्य।
(१३) डाक्टर वैद्य।
(१४) शान्ति सरोवर।
(१५) जग-दर्शन-मेला।
(१६) शंकराचार्य नाटक।
(१७) देशभक्त अष्टोत्तरी।
(१८) राष्ट्रीय ध्वनि।